चारित्रमोह-उपशमन अधिकार 5

Presentation Developed By:
Smt Sarika Vikas Chhabra

मंगलाचरण

सिद्धे जिणिंदचंदे, आयरिय-उवज्झाय-साहुगणे ।
वंदिय सम्मद्दंसण-चरित्तलद्धिं परूवेमो ॥1॥

पढमावेदे संजलणाणं अंतोमुहुत्तपरिहीणं ।
वस्साणं बत्तीसं, संखसहस्सियरगाण ठिदिबंधो ॥268॥

- अन्वयार्थ - (पढमावेदे) अवेद के प्रथम समय में (संजलणाणं) संज्वलन कषाय का (अंतोमुहुत्तपरिहीणं) अंतर्मुहूर्त कम (वस्साणं बत्तीस) बत्तीस वर्षप्रमाण और (इयरगाण) अन्य कर्मों का (संखसहस्स) संख्यात हजार वर्ष प्रमाण (ठिदिबंधो) स्थितिबन्ध होता है ॥268॥

अपगतवेदी के प्रथम समय में स्थितिबंध

सवेद के अंतिम समय में बंध 32 वर्ष प्रमाण था ।

वहाँ स्थितिबंधापसरण पूर्ण होने से एक अंतर्मुहूर्त का अपसरण होकर अनंतर अपगतवेद में (32 वर्ष – अंतर्मुहूर्त) प्रमाण बंध होता है ।

कर्म	स्थिति-बंध	अल्प-बहुत्व
4 संज्वलन	32 वर्ष – अंतर्मुहूर्त	स्तोक
तीसीय – घातिया	संख्यात हजार वर्ष	संख्यात गुणा
नाम-गोत्र	संख्यात हजार वर्ष	संख्यात गुणा
वेदनीय	संख्यात हजार वर्ष	विशेष अधिक

पढमावेदो तिविहं, कोहं उवसमदि पुव्वपढमठिदी ।
समयाहियआवलियं, जाव य तक्कालठिदिबंधो ॥269॥

- अन्वयार्थ - (पढमावेदो) प्रथम समयवर्ती अपगतवेदी (तिविहं कोहं) तीन प्रकार के क्रोध को (उवसमदि) उपशमित करता है। (समयाहिय आवलियं जाव) एक समय अधिक आवलि शेष रहने तक (पुव्वपढमठिदी) पूर्व की ही प्रथम स्थिति रहती है (य) और (तक्कालठिदिबंधो) उस काल में स्थितिबन्ध (आगे गाथा में कहते हैं) ॥269॥

प्रथम समयवर्ती अपगतवेदी की क्रियाएँ

प्रथम समयवर्ती अपगतवेदी अनिवृत्तिकरण विशुद्धिसंयत; पुरुषवेद के नवकबंध के साथ तीन प्रकार के क्रोध का उपशमन प्रारंभ करता है ।

उदीयमान संज्वलन क्रोध की प्रथम स्थिति ही चल रही है जो कि अंतरकरण के समय पुरुषवेद की प्रथम स्थिति से कुछ अधिक प्रमाण वाली स्थापित की थी ।

संज्वलन क्रोध का उदय तब तक चलता है, जब तक कि इस प्रथम स्थिति में (आवली + 1) समय रहता है । प्रथम स्थिति की अंतिम आवली उच्छिष्टावली कहलाती है । उसका स्वमुख से उदय ना होकर उदयमान अन्य प्रकृति में संक्रमण होकर उदय होता है ।

3 क्रोध का उपशमन

संज्वलन क्रोध की प्रथम स्थिति अपगतवेदी होने के पश्चात् अलग से नहीं बनाई जा रही । वह अंतरकरण के समय ही स्थापित की जा चुकी थी ।

ऐसे प्रत्येक समय में अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान, संज्वलन – तीनों क्रोध को असंख्यात गुणा क्रम से उपशमित करता है ।

जब प्रथम स्थिति में 2 आवली शेष रहती है, तब आगाल-प्रत्यागाल बंद हो जाते हैं, गुणश्रेणी निक्षेप बंद हो जाता है, मात्र प्रत्यावली से उदीरणा होती है ।

प्रथम स्थिति में (एक आवली + 1) समय शेष रहने पर जघन्य 1 निषेक की उदीरणा होती है । यहीं पर संज्वलन क्रोध की बंध, उदय की व्युच्छित्ति हो जाती है ।

संजलणचउक्काणं, मासचउक्कं तु सेसपयडीणं ।
वस्साणं संखेज्जसहस्साणि हवंति णियमेण ॥270॥

- अन्वयार्थ - (संजलणचउक्काणं) संज्वलनचतुष्क का स्थिति-बंध (मासचउक्कं) चार माह (सेसपयडीणं तु) और शेष प्रकृतियों का स्थिति-बंध (वस्साणं संखेज्जसहस्साणि) संख्यात हजार वर्ष (णियमेण) नियम से (हवंति) होता है ॥270॥

संज्वलन क्रोध के उपशमन के अंतिम समय में स्थिति-बंध

इस प्रकार संख्यातों हजार बंधापसरण के होने पर संज्वलन क्रोध की बंध व्युच्छित्ति के समय यह स्थिति-बंध होता है –

संज्वलन – 4	शेष कर्म
4 मास	संख्यात हजार वर्ष

शेष कर्मों के स्थिति-बंध का अल्प-बहुत्व पूर्ववत् जानना ।

कोहदुगं संजलणगकोहे संछुहदि जाव पढमठिदी ।
आवलितियं तु उवरिं, संछुहदि हु माणसंजलणे ॥271॥

- अन्वयार्थ - (जाव पढमठिदी) जब तक प्रथमस्थिति (आवलितियं) तीन आवलि शेष रहती है तब तक (कोहदुगं) दो क्रोध को (अप्रत्याख्यान-प्रत्याख्यान क्रोध को) (संजलणगकोहे) संज्वलन क्रोध में (संछुहदि) संक्रमित करता है,
- (तु उवरिं) परन्तु उसके बाद (माण संजलणे) संज्वलन मान में (संछुहदि हु) संक्रमित करता है ॥271॥

www.JainKosh.org

3 क्रोध द्रव्य का संक्रमण

अपगतवेदी के प्रथम समय से संज्वलन क्रोध की प्रथम स्थिति में तीन आवली शेष रहने तक अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान क्रोध का गुण संक्रमण संज्वलन क्रोध में होता है ।

संज्वलन क्रोध की प्रथम स्थिति में तीन आवली शेष रहने पर अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान क्रोध का संक्रमण संज्वलन मान में होता है ।

प्रश्न- ऐसा नियम क्यों किया है?

उत्तर – 1) संक्रमण होने के एक आवली पर्यंत संक्रमित द्रव्य तदवस्थ रहता है । उसका उपशम, संक्रमण आदि नहीं हो सकता है ।

2) द्रव्य के उपशम में न्यूनतम एक आवली काल लगता ही है ।

ऐसा होने से प्रथम स्थिति में 3 आवली से अधिक समय रहने पर 1 आवली तो संक्रमणावली हो जाएगी, एक आवली उपशमावली हो जाएगी । तब संज्वलन क्रोध की उच्छिष्टावली शेष रहने पर संक्रमित द्रव्य; उपशमित भी हो जाएगा ।

परंतु यदि दोनों क्रोध का द्रव्य प्रथम स्थिति में 3 आवली से कम बचने पर भी संज्वलन क्रोध में संक्रमित किया जाये, तो उस संक्रमित द्रव्य की संक्रमणावली, उपशमनावली कहाँ से ग्रहण की जायेगी ?

तथा संज्वलन क्रोध की बंध-व्युच्छित्ति होने पर नवक समयप्रबद्ध को छोड़कर शेष सर्व क्रोध का द्रव्य उपशमित होना चाहिए ।

इसलिए तीन आवली पूर्व तक ही 2 क्रोध का द्रव्य संज्वलन क्रोध में संक्रमित होता है, पश्चात् संज्वलन मान में संक्रमित होता है ।

प्रश्न – दो आवली शेष रहने तक 2 क्रोध का द्रव्य संज्वलन क्रोध में संक्रमित कर सकते हैं । फिर 'तीन आवली शेष रहने तक' क्यों कहा है?

उत्तर – जो तीसरी आवली है, वह उच्छिष्टावली है ।

उस समय क्रोध का बंध या उदय नहीं होता ।

क्रोध के अंतिम बंध के साथ ही सारे क्रोध द्रव्य का उपशमन होना चाहिये। इसलिए 3 आवली शेष रहने तक संक्रमण कहा है ।

3 आवली रहने तक संक्रमण की स्थिति

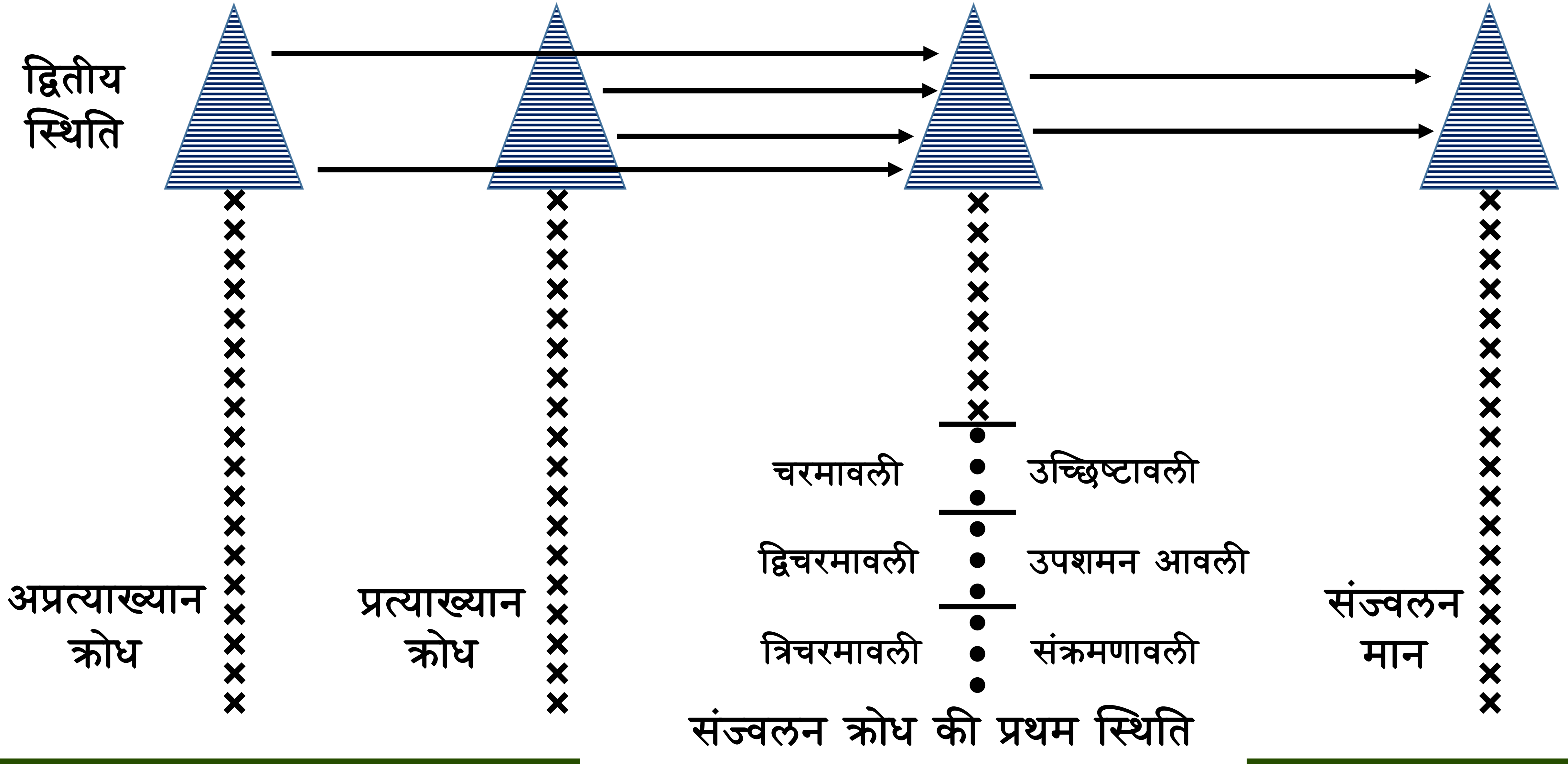

3 आवली से कम रहने पर संक्रमण की स्थिति

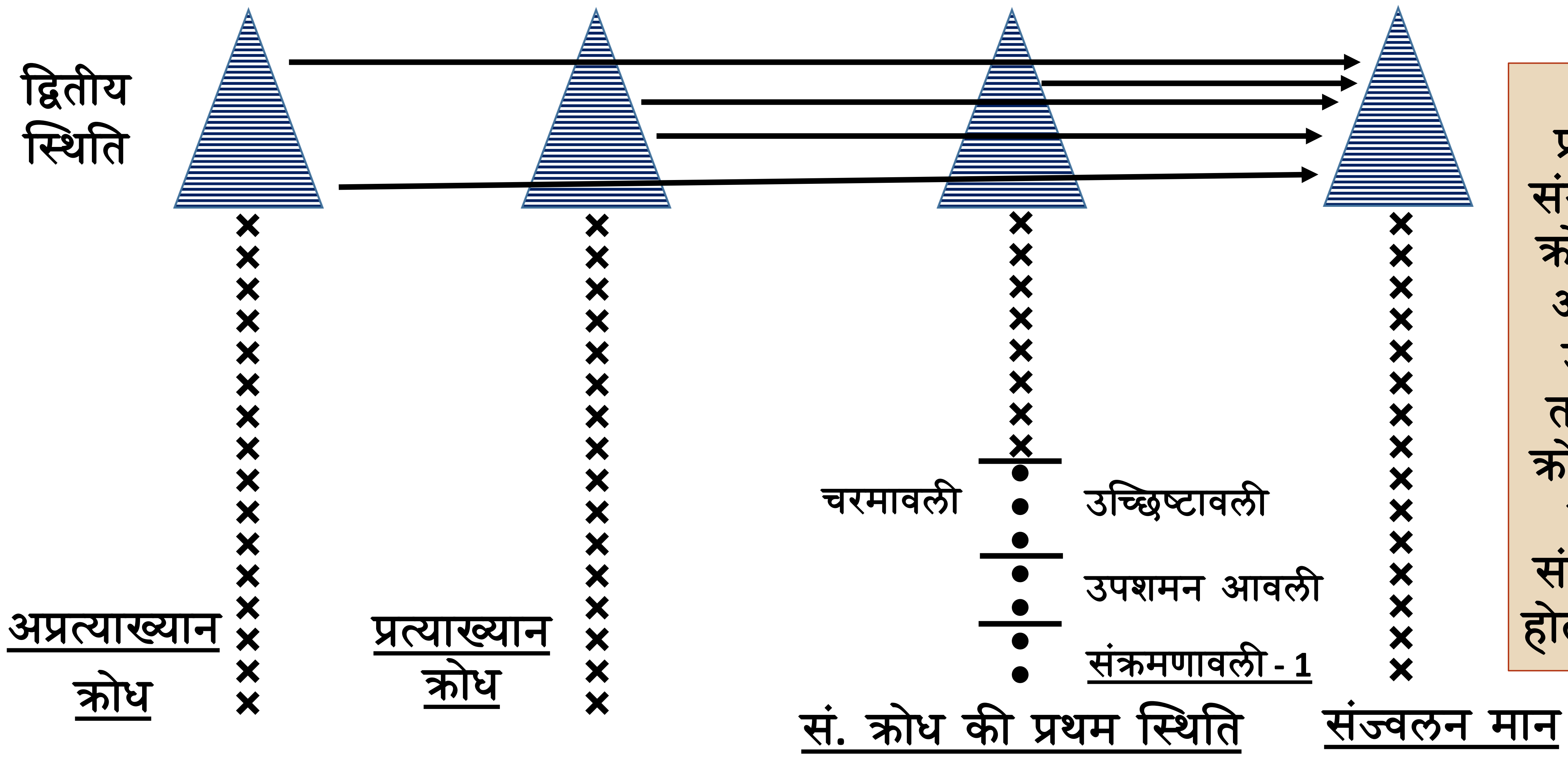

इस प्रकार संज्वलन क्रोध के अंतिम उदय तक 3 क्रोध का द्रव्य संक्रमित होता है ।

कोहस्स य पढमठिदी, आवलिसेसे तिकोहमुवसंतं ।
ण य णवकं तत्थंतिमबंधुदया होंति कोहस्स ॥272॥

- अन्वयार्थ - (कोहस्स य पढमठिदी) क्रोध की प्रथम स्थिति (आवलिसेसे) एक आवलि शेष रहने पर (तिकोहं) तीनों क्रोध (उवसंतं) उपशान्त हुए, (णवकं ण य) परन्तु नवक समयप्रबद्ध उपशांत नहीं हुआ। (तत्थ) वहाँ (कोहस्स) क्रोध का (अंतिमबंधुदया) अंतिम बंध व अंतिम उदय (होंति) होता है। ॥272॥

उपशमन आवली के अंतिम समय में संभवने वाली क्रिया विशेष

क्रोध की प्रथम स्थिति में एक उच्छिष्टावली शेष रहने पर तीनों क्रोध का सर्व सत्त्व द्रव्य उपशमित हो जाता है ।

मात्र उच्छिष्टावली प्रमाण संज्वलन क्रोध एवं (2 आवली – 1) प्रमाण नवक समयप्रबद्ध का उपशमन नहीं हुआ है ।

इनमें से उच्छिष्टावली प्रमाण निषेक तो एक-एक समय बीतने पर स्तिबुक संक्रमण के द्वारा उदीयमान संज्वलन मान में संक्रमित हो जायेंगे ।

नवक समयप्रबद्ध का उपशमन (2 आवली – 1) प्रमाण समयों में हो जायेगा । जैसे पुरुषवेद के नवक समयप्रबद्ध का उपशमन बताया है, उसी प्रकार संज्वलन क्रोध के नवक समयप्रबद्ध का भी जानना ।

संज्वलन क्रोध की उपशमनावली के अंतिम समय में संज्वलन क्रोध की बंध और उदय व्युच्छित्ति युगपत् होती है ।

संज्वलन क्रोध का अंतिम उदय

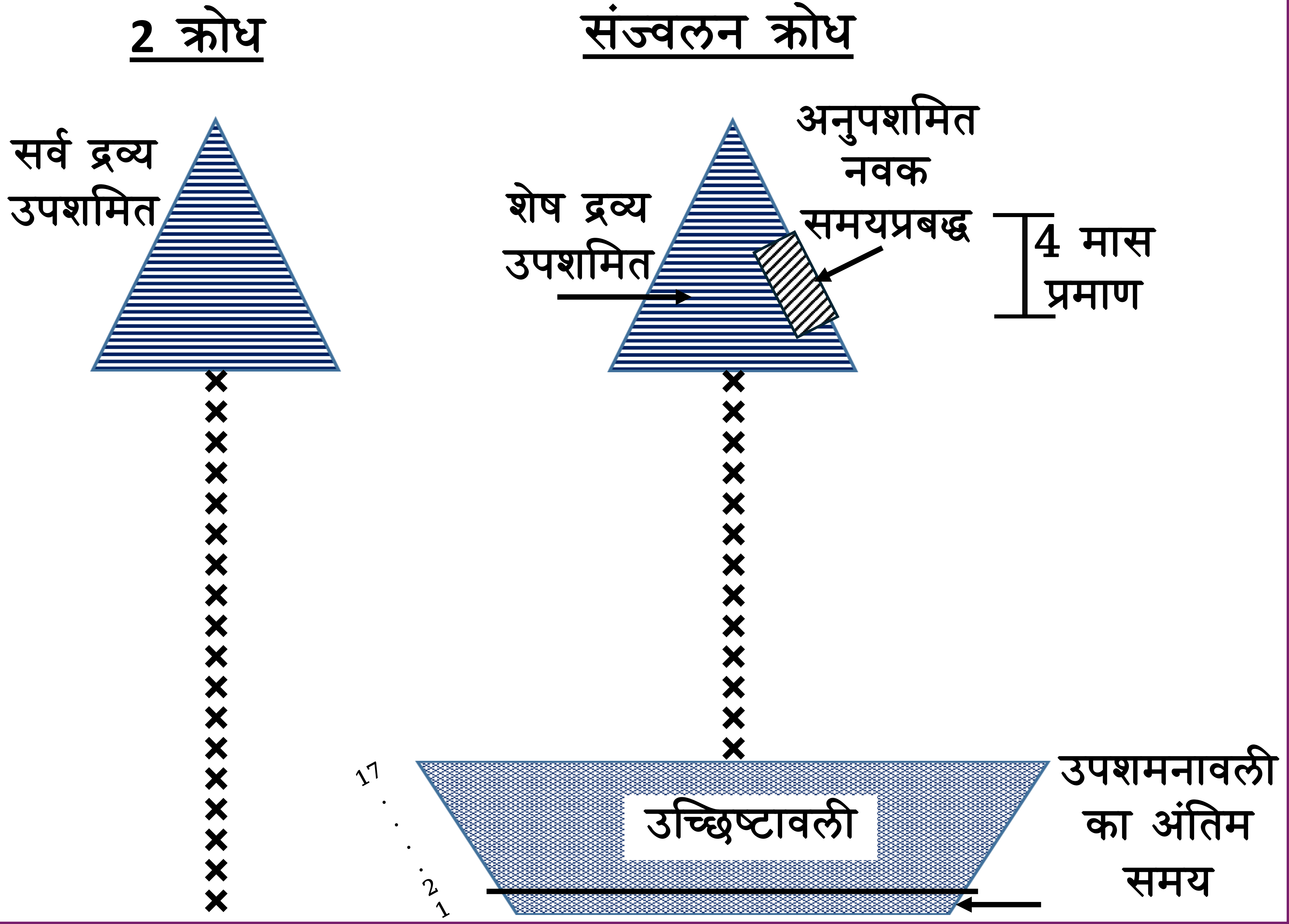

यहाँ ही क्रोध की बंध-उदय व्युच्छित्ति होती है ।

इस प्रकार तीनों क्रोध का उपशमन हो जाता है ।

से काले माणस्स य, पढमट्ठिदिकारवेदगो होदि ।
पढमट्ठिदिम्मि दव्वं, असंखगुणियक्कमे देदि ॥273॥

- अन्वयार्थ - (से काले) उस काल में (माणस्स य) संज्वलन मान की (पढमट्ठिदिकारवेदगो) प्रथम स्थिति का कारक व वेदक (कर्ता व भोक्ता) (होदि) होता है। (पढमट्ठिदिम्मि) प्रथम स्थिति में (दव्वं) द्रव्य (असंखगुणियक्कमे) असंख्यातगुणित क्रम से (देदि) देता है ॥273॥

मान की प्रथम स्थिति का कारक एवं वेदक

क्रोध के उपशमन करने के अनंतर समय में संज्वलन मान की प्रथम स्थिति का करने वाला और भोगने वाला (वेदक) होता है ।

अर्थात् द्वितीय स्थिति से संज्वलन मान का अपकर्षण करके प्रथम स्थिति बनाई जाती है ।

प्रथम स्थिति बनाने के साथ ही संज्वलन मान का उदय भी प्रारंभ होता है ।

इसलिये इसे मान की प्रथम स्थिति का कारक एवं वेदक कहा जाता है ।

प्रश्न – क्रोध के उदय में ही क्रोध के साथ मान का उपशमन क्यों नहीं कर देते ?

उत्तर- 3 क्रोध के उपशमन के साथ अन्य कषाय का उपशमन नहीं होता है । क्रमशः प्रक्रिया पूरी होती है । इसलिये क्रोध के साथ मान आदि का उपशमन संभव नहीं है ।

प्रश्न – क्रोध के उदय में क्रोध के बाद मान का उपशमन क्यों नहीं कर देते ?

उत्तर- क्रोध का उदय क्रोध के उपशमन तक ही संभव है । इसके बाद क्रोध की बंध-उदय व्युच्छित्ति होती ही है । इसलिये क्रोध के उदय में मान आदि का उपशमन संभव नहीं है ।

इसलिये संज्वलन मान की प्रथम स्थिति बनाई जा रही है ।

मान की प्रथम स्थिति का कारक, वेदक

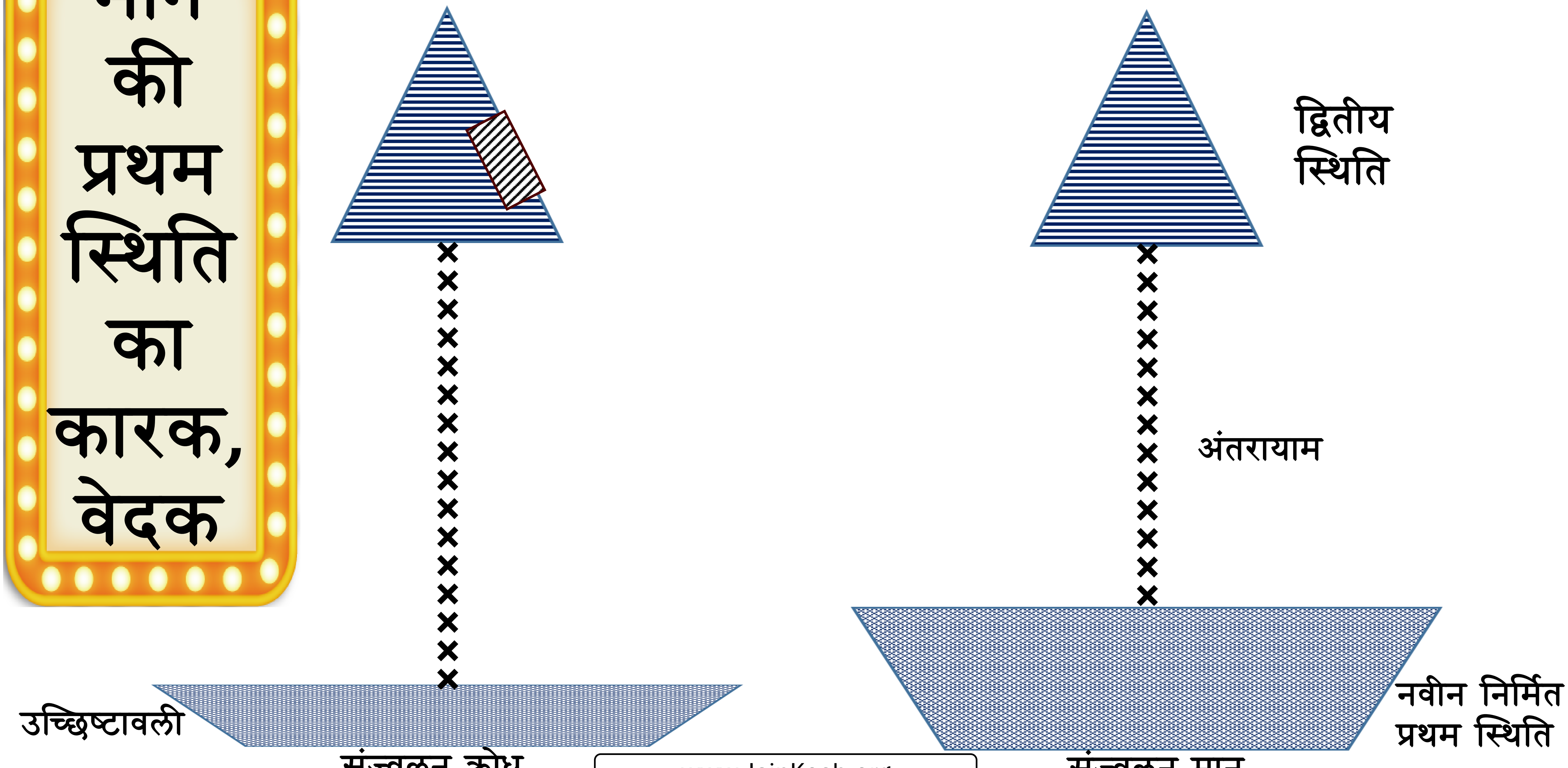

अपकर्षण द्वारा प्रथम स्थिति की रचना

मोहनीय सत्त्व द्रव्य	• स ∂ | १२ – ७
4 कषाय का द्रव्य	• स ∂ | १२ – ७ | २
1 कषाय का द्रव्य	• स ∂ | १२ – ७ | २ × ४ = स ∂ | १२ – ७ | ८
संज्वलन मान द्रव्य	• स ∂ | १२ – ७ | ८
अपकृष्ट द्रव्य	• संज्वलन मान द्रव्य ओ

अपकृष्ट द्रव्य

अपकृष्ट द्रव्य / पल्य/असंख्यात

अपकृष्ट द्रव्य / पल्य/असंख्यात × (प/∂ − 1)

एकभाग द्रव्य,
प्रथम स्थिति हेतु

बहुभाग द्रव्य,
द्वितीय स्थिति हेतु

अपकृष्ट द्रव्य का बंटवारा

एकभाग द्रव्य को वर्तमान समय से लेकर अंतर्मुहूर्त प्रमाण क्रियमाण प्रथम स्थिति के अंतिम निषेक तक असंख्यात गुणित क्रम से दिया जाता है । इससे द्रव्य गुणश्रेणी रूप से वर्तमान समय से अंतर्मुहूर्त प्रमाण स्थिति में आ जाता है ।

बहुभाग प्रमाण द्रव्य द्वितीय स्थिति में अपनी-अपनी अतिस्थापनावली छोड़कर नीचे द्वितीय स्थिति के प्रथम निषेक तक दिया जाता है ।

प्रथम निषेक से लेकर ऊपर अतिस्थापनावली के पूर्व तक विशेष हीन क्रम से यह द्रव्य निक्षिप्त होता है ।

द्वितीयादि समयों में अपकर्षण

जैसे प्रथम समय में द्रव्य अपकर्षित होता है, वैसे द्वितीयादि समयों में भी द्रव्य का अपकर्षण, बंटवारा आदि जानना चाहिए । प्रत्येक समय में अपकृष्ट द्रव्य असंख्यात गुणा होता है ।

प्रथम स्थिति का एक-एक निषेक द्रव्य उदय में आता जाता है । शेष आयाम प्रमाण प्रथम स्थिति शेष रहती है । यह उदयादि गलितावशेष गुणश्रेणी है ।

प्रथम एवं द्वितीय स्थिति के बीच अंतरायाम अभी भी वर्तमान है क्योंकि पूरे अंतरायाम प्रमाण प्रथम स्थिति नहीं बनाई है ।

पढमट्ठिदिसीसादो, विदियादिम्हि य असंखगुणहीणं ।
तत्तो विसेसहीणं, जाव अइच्छावणमपत्तं ॥274॥

- अन्वयार्थ - (पढमट्ठिदिसीसादो) प्रथम स्थिति के शीर्ष से (अंतिम निषेक से) (विदियादिम्हि य) द्वितीय स्थिति के प्रथम निषेक में (असंखगुणहीणं) असंख्यातगुणा कम द्रव्य देता है।
- (तत्तो) उसके बाद (जाव अइच्छावणमपत्तं) जब तक अतिस्थापना प्राप्त नहीं होती तब तक (विसेसहीणं) विशेषहीनरूप से देता है ॥274॥

अपकृष्ट द्रव्य का निक्षेपण क्रम

एकभाग प्रमाण गुणश्रेणी का द्रव्य उदय निषेक से प्रथम स्थिति के अंतिम निषेक तक असंख्यात गुणा-असंख्यात गुणा दिया जाता है ।

प्रथम स्थिति के अंतिम निषेक (शीर्ष) में निक्षिप्त द्रव्य से द्वितीय स्थिति के प्रथम निषेक में निक्षिप्त द्रव्य असंख्यात गुणाहीन है । क्योंकि बहुभाग प्रमाण द्रव्य को 1.5 गुणहानि से भाग देने पर प्राप्त द्रव्य; द्वितीय स्थिति के प्रथम निषेक में निक्षिप्त किया जाता है । यह एक समयप्रबद्ध का का असंख्यातवां भाग है । जबकि प्रथम स्थिति के अंतिम निषेक में प्राप्त द्रव्य असंख्यात समयप्रबद्ध है ।

प्रथम निषेक से दूसरे निषेक में निक्षिप्त द्रव्य चयहीन होता है । ऐसे विशेष हीन क्रम से तब तक द्रव्य का निक्षेपण होता है, जहाँ तक अतिस्थापनावली प्राप्त नहीं होती ।

मानवेदक के कार्य

संज्वलन मान की प्रथम स्थिति के वेदन समय से द्वितीय स्थिति के तीनों मान द्रव्य का उपशमन करना प्रारंभ करता है । प्रत्येक समय में असंख्यात गुणा द्रव्य का उपशम किया जाता है ।

संज्वलन क्रोध के नवक समयप्रबद्ध भी इस समय उपशमित हो रहे हैं ।

इस ही समय संज्वलन क्रोध के उच्छिष्टावली प्रमाण निषेकों में से अनंतर एक निषेक संज्वलन मान में संक्रमित होता है, जो अगले समय उदय में आयेगा ।

माणस्स य पढमठिदी, सेसे समयाहिया तु आवलियं ।
तियसंजलणगबंधो, दुमास सेसाण कोह आलावो ॥275॥

- अन्वयार्थ - (माणस्स य पढमठिदि) मान की प्रथम स्थिति (समयाहिया तु आवलियं) एक समय अधिक आवलिप्रमाण (सेसे) शेष रहने पर (तियसंजलणगबंधो) तीन संज्वलन का स्थितिबन्ध (दुमास) दो मास होता है और (सेसाण) शेष कर्मों का स्थिति-बंध (कोह आलावो) क्रोध के आलाप के समान अर्थात् संख्यात हजार वर्ष होता है ॥275॥

मान के उपशमन के अंतिम समय बंध

संज्वलन मान की प्रथम स्थिति में (आवली + 1) समय शेष रहने पर संज्वलन मान की बंध-उदय व्युच्छित्ति होती है । यही मान की उपशमनावली का अंतिम समय है ।

मान के उपशमन के अंतिम समय संज्वलन मान-माया-लोभ का दो मास प्रमाण अंतिम बंध होता है । शेष कर्मों का भी संख्यात गुणाहीन बंध होता है । परंतु अभी भी संख्यात हजार वर्ष प्रमाण स्थिति-बंध होता है ।

कर्मों के स्थिति-बंध का अल्प-बहुत्व पूर्ववत् है ।

माणदुगं संजलणगमाणे संछुहदि जाव पढमठिदि ।
आवलितियं तु उवरिं, मायासंजलणगे य संछुहदि ॥276॥

- अन्वयार्थ - (जाव पढमठिदी आवलितियं) जब तक प्रथम स्थिति तीन आवलि रहती है तब तक (माणदुगं) दो मान का (संजलणमाणे) संज्वलन मान में (संछुहदि) संक्रमण करता है,
- (तु उवरिं) परन्तु उसके बाद (मायासंजलणगे य) माया संज्वलन में (संछुहदि) संक्रमण करता है ॥276॥

मान का संक्रमण किसमें?

संज्वलन मान की प्रथम स्थिति में
3 आवली शेष रहने तक संक्रमण

- अप्रत्याख्यान मान → संज्वलन मान
- प्रत्याख्यान मान → संज्वलन मान
- संज्वलन मान → संज्वलन माया

उसके बाद उपशमनावली तक संक्रमण

- अप्रत्याख्यान मान → संज्वलन माया
- प्रत्याख्यान मान → संज्वलन माया
- संज्वलन मान → संज्वलन माया

जैसे संज्वलन क्रोध के समय इसका कारण कहा था, वैसे ही यहाँ एवं आगे भी जानना ।

माणस्स य पढमठिदी, आवलिसेसे तिमाणमुवसंतं ।
ण य णवकं तत्थंतिमबंधुदया होंति माणस्स ॥277॥

- अन्वयार्थ - (माणस्स य पढमठिदी) मान की प्रथम स्थिति (आवलिसेसे) एक आवलि शेष रहने पर (तिमाणं) तीन मान का द्रव्य (उवसंतं) उपशान्त हुआ।
- (ण य णवकं) नवक समयप्रबद्ध का द्रव्य उपशान्त नहीं हुआ।
- (तत्थ) वहाँ (माणस्स) मान का (अंतिमबंधुदया) अंतिम बंध व अंतिम उदय (होंति) होता है ॥277॥

संज्वलन मान का उपशमन

संज्वलन मान की प्रथम स्थिति में (आवली + 1) समय शेष रहने पर तीनों मान का द्रव्य युगपत् उपशमित हो जाता है ।

मात्र संज्वलन मान के (2 आवली – 1) समय प्रमाण नवक समयप्रबद्ध का उपशमन शेष रहता है । इनका उपशमन आगे (2 आवली – 1) प्रमाण समयों में हो जायेगा ।

संज्वलन मान की प्रथम स्थिति में एक आवली प्रमाण उच्छिष्टावली शेष है । थिउक्क संक्रमण के द्वारा यह द्रव्य संज्वलन माया में एक-एक निषेक संक्रमित होकर उदय में आयेगा ।

संज्वलन मान का अंतिम उदय

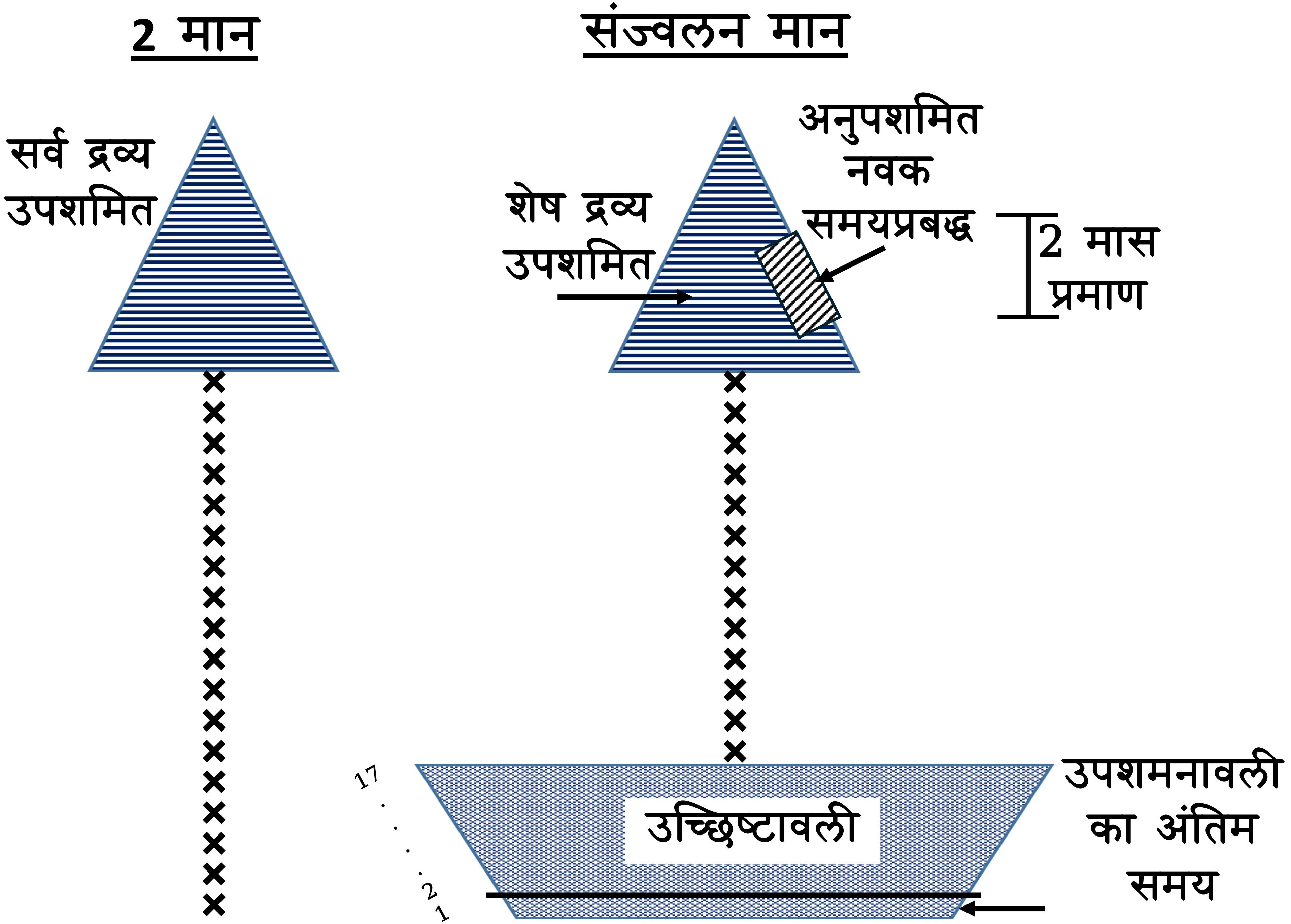

यहाँ ही मान की बंध-उदय व्युच्छित्ति होती है ।

इस प्रकार तीनों मान का उपशमन हो जाता है ।

से काले मायाए, पढमट्ठिदिकारवेदगो होदि ।
माणस्स य आलाओ, दव्वस्स विभंजणो तत्थ ॥278॥

- अन्वयार्थ - (से काले) उस काल में (मायाए) माया की (पढमट्ठिदिकारवेदगो) प्रथम स्थिति का कारक और वेदक (होदि) होता है ।
- (तत्थ) वहाँ (दव्वस्स विभंजणो) द्रव्य का विभाजन (माणस्स य आलाओ) मान द्रव्य के समान कहना चाहिए ॥278॥

www.JainKosh.org

माया की प्रथम स्थिति का कारक एवं वेदक

3 मान के उपशमन के अनंतर समय में संज्वलन माया की अंतर्मुहूर्त प्रमाण प्रथम स्थिति का कारक और वेदक होता है ।

जैसे पूर्व में संज्वलन मान की प्रथम स्थिति का कारक, वेदक, अपकर्षण द्वारा उदयादि गुणश्रेणी, द्रव्य का बंटवारा आदि कहा था, वैसा ही यहाँ सारा कथन जानना ।

इस ही समय संज्वलन मान के उच्छिष्टावली के निषेक थिउक्क संक्रमण के द्वारा संज्वलन माया की समस्थिति में एक-एक करके उदय में आयेंगे ।

यहाँ संज्वलन मान के नवक समयप्रबद्धों का उपशमन भी किया जा रहा है ।

मायाए पढमठिदी, सेसे समयाहियं तु आवलियं ।
मायालोहगबंधो, मासं सेसाण कोह आलाओ ॥279॥

- अन्वयार्थ - (मायाए पढमठिदी) माया की प्रथम स्थिति (समयाहियं तु आवलियं) एक समय अधिक आवलि (सेसे) शेष रहने पर (मायालोहगबंधो) माया और लोभ का स्थितिबन्ध (मासं) एक माह होता है और (सेसाण) शेष कर्मों का (कोह आलावो) क्रोध के समान आलाप (कथन) जानना चाहिए ॥279॥

संज्वलन माया का अंतिम स्थिति-बंध

संज्वलन माया की प्रथम स्थिति में (आवली + 1) समय शेष रहने पर संज्वलन माया-लोभ का स्थिति-बंध बंधापसरणों से घटकर एक मास प्रमाण होता है ।

शेष कर्मों का स्थिति-बंध संख्यात गुणाहीन संख्यात हजार वर्ष प्रमाण होता है । अल्व-बहुत्व पूर्ववत् है ।

मायदुगं संजलणगमायाए छुहदि जाव पढमठिदी ।
आवलितियं तु उवरिं, संछुहदि हु लोहसंजलणे ॥280॥

- अन्वयार्थ - (जाव पढमठिदी आवलितियं) जब तक प्रथम स्थिति तीन आवलि रहती है तब तक (मायदुगं) दो माया का द्रव्य (संजलणगमायाए) संज्वलन माया में (छुहदि) संक्रमित करता है (तु उवरिं) परन्तु उसके बाद (लोहसंजलणे) संज्वलन लोभ में (संछुहदि हु) संक्रमित करता है ॥280॥

www.JainKosh.org

माया का संक्रमण किसमें?

संज्वलन माया की प्रथम स्थिति में 3 आवली शेष रहने तक संक्रमण

- अप्रत्याख्यान माया → संज्वलन माया
- प्रत्याख्यान माया → संज्वलन माया
- संज्वलन माया → संज्वलन लोभ

उसके बाद उपशमनावली तक संक्रमण

- अप्रत्याख्यान माया → संज्वलन लोभ
- प्रत्याख्यान माया → संज्वलन लोभ
- संज्वलन माया → संज्वलन लोभ

मायाए पढमठिदी, आवलिसेसे त्ति मायमुवसंतं ।
ण य णवकं तत्थंतिमबंधुदया होंति मायाए ॥281॥

- अन्वयार्थ- (मायाए पढमठिदी) माया की प्रथम स्थिति (आवलिसेसे त्ति) एक आवलि शेष रहने पर (मायं उवसंतं) माया का उपशमन हुआ, (ण य णवकं) नवक समयप्रबद्धों का उपशमन नहीं हुआ।
- (तत्थ) वहाँ (मायाए) माया का (अंतिमबंधुदया) अंतिम बंध और अंतिम उदय (होंति) होता है ॥281॥

संज्वलन माया की प्रथम स्थिति में आवली शेष रहने पर –

3 माया का सर्व सत्त्व द्रव्य उपशमित हो जाता है ।

मात्र संज्वलन माया के (2 आवली – 1) समय प्रमाण नवक समयप्रबद्ध उपशमित होने से शेष हैं ।

तब ही संज्वलन माया के उच्छिष्टावली का प्रथम निषेक संज्वलन लोभ में संक्रमित होकर उदय में आता है ।

यहाँ संज्वलन माया का बंध एवं उदय नहीं है, व्युच्छिन्न हो चुका है ।

से काले लोहस्स य, पढमट्ठिदिकारवेदगो होदि ।
तं पुण बादरलोहो, माणं वा होदि णिक्खेओ ॥282॥

- अन्वयार्थ - (से काले) उस काल में (लोहस्स य) (वह अनिवृत्तिकरण बादरसांपराय जीव) संज्वलन लोभ की (पढमट्ठिदिकारवेदगो होदि) प्रथम स्थिति का कारक व वेदक (होदि) होता है।
- (पुण) पुनः (तं बादरलोहो) उस बादर लोभ का (माणं वा) मान कषाय के समान ही (णिक्खेओ) निक्षेप (होदि) होता है ॥282॥

लोभ की प्रथम स्थिति का कारक एवं वेदक

3 माया के उपशमन के अनंतर समय में 3 लोभ का उपशमन प्रारंभ करने वाला जीव संज्वलन लोभ की अंतर्मुहूर्त प्रमाण प्रथम स्थिति का कारक, वेदक होता है ।

जैसे संज्वलन मान की द्वितीय स्थिति से द्रव्य का अपकर्षण कर संज्वलन मान की स्थिति बनायी थी, उसी प्रकार संज्वलन लोभ की सारी प्रक्रिया जानना ।

3 लोभ का उपशमन प्रारंभ होने पर उसी समय संज्वलन माया के नवक समयप्रबद्धों का भी (2 आवली – 1) समय तक उपशमन होता है ।

संज्वलन माया की उच्छिष्टावली के एक-एक निषेक संज्वलन लोभ में संक्रमित होकर निर्जरित होते हैं ।

क्रमशः प्रथम स्थिति का स्थापन

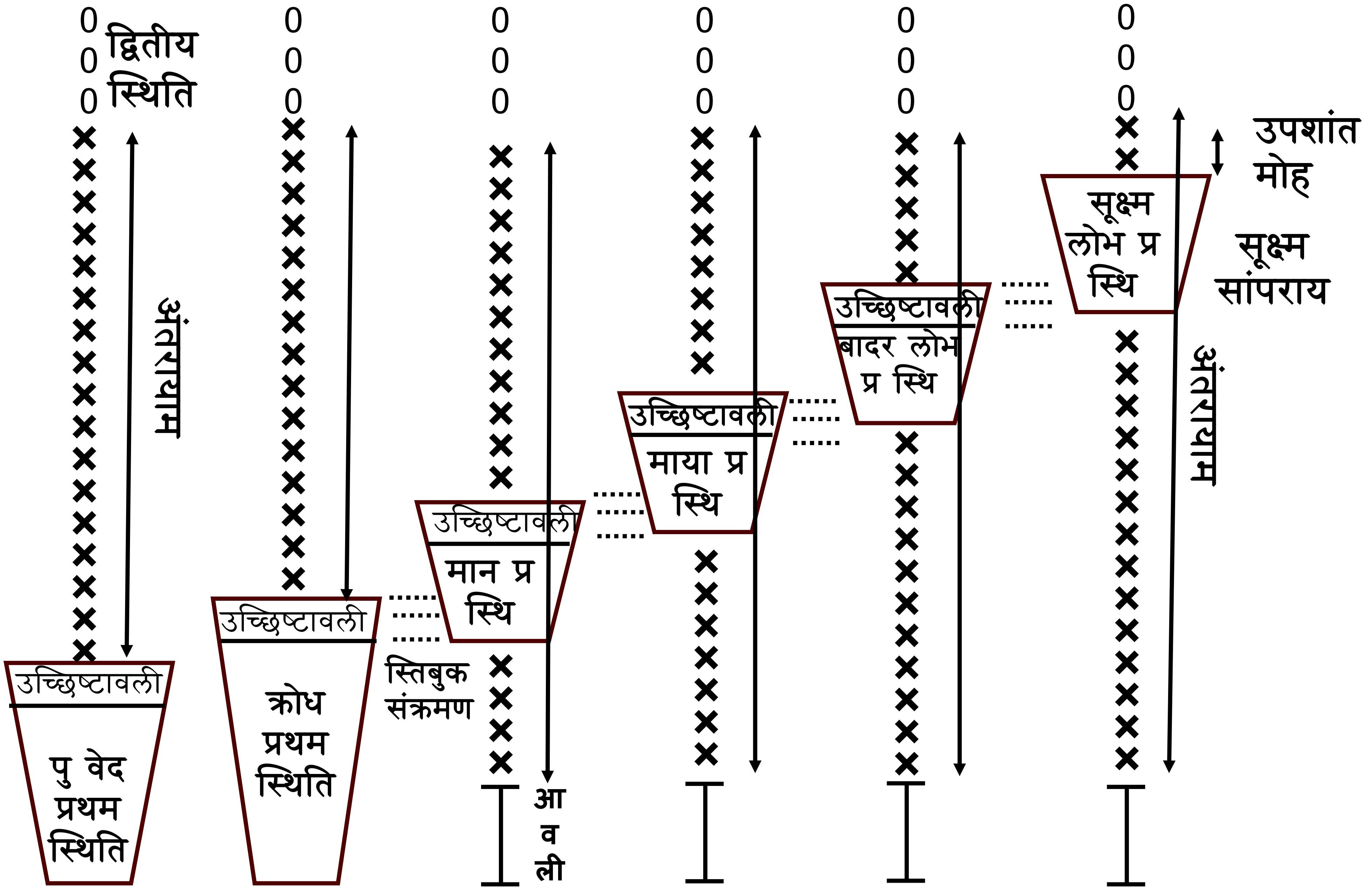

पढमट्ठिदिअद्धंते, लोहस्स य होदि दिणपुधत्तं तु ।
वस्ससहस्सपुधत्तं, सेसाणं होदि ठिदिबंधो ॥283॥

- अन्वयार्थ - (पढमट्ठिदि अद्धंते) बादरलोभ की प्रथम स्थिति के अर्ध के अंत में (लोहस्स य) लोभ का (ठिदिबंधो) स्थितिबन्ध (दिणपुधत्तं) दिवस पृथक्त्व (होदि) होता है, (तु) परन्तु (सेसाणं) शेष कर्मों का (ठिदिबंधो) स्थिति-बंध (वस्ससहस्सपुधत्तं) हजार वर्ष पृथक्त्व (होदि) होता है ॥283॥

लोभ वेदक काल

सूक्ष्म-सांपराय — सूक्ष्म लोभ वेदक काल (अंतर्मुहूर्त प्रमाण)

अनिवृत्तिकरण — बादर लोभ वेदक काल (अंतर्मुहूर्त प्रमाण)

बादर लोभ वेदक + सूक्ष्म लोभ वेदक = लोभ वेदक काल

कुल मिलाकर यह अंतर्मुहूर्त प्रमाण होता है । 2 ૨

इस लोभ वेदक काल के तीन विभाग करें । प्रथम से द्वितीय, द्वितीय से तृतीय भाग कुछ कम होता है ।

प्रथम भाग	द्वितीय भाग	तृतीय भाग
2 ૨ + 3	2 ૨ – 3	2 ૨ = 3
बादर लोभ वेदक का अर्ध काल	कृष्टिकरण काल	कृष्टि वेदक काल
अनिवृत्तिकरण का शेष समय		सूक्ष्म-सांपराय

बादर लोभ के प्रथमार्ध भाग के अंत में स्थिति-बंध

अनिवृत्तिकरण का शेष समय = बादर लोभ वेदक काल =

$\frac{\text{लोभ वेदक काल} \times 2}{3}{}_{+}$ = लोभ की प्रथम स्थिति का प्रमाण

इस बादर लोभ वेदक काल का साधिक अर्ध भाग बीतने पर अंत समय में संज्वलन लोभ का स्थिति-बंध दिवस-पृथक्त्व होता है । शेष कर्मों का संख्यात हजार वर्ष प्रमाण होता है । अल्प-बहुत्व पूर्ववत् है ।

www.JainKosh.org

विदियद्धे लोभावरफड्डयहेट्ठा करेदि रसकिट्टिं ।
इगिफड्डयवग्गणगद-संखाणमणंतभागमिदं ॥284॥

- अन्वयार्थ - (विदियद्धे) बादर संज्वलन लोभ की प्रथम स्थिति के दूसरे अर्धभाग में (लोभावरफड्डयहेट्ठा) लोभ के जघन्य स्पर्धक के नीचे (रसकिट्टिं) अनुभागकृष्टि (करेदि) करता है।
- (इदं) यह कृष्टि (इगिफड्डयवग्गणगदसंखाणमणंतभागं) एक स्पर्धक की वर्गणासंख्या का अनन्तवाँ भागप्रमाण है ॥284॥

कृष्टि

‘कर्शनं कृष्टिः’ – कर्म परमाणु की शक्ति कृश करना, उसे कृष्टि कहते हैं ।

अथवा कृश किया जाता है, उसे कृष्टि कहते हैं ।

कृष्टिकरण

संज्वलन लोभ की प्रथम स्थिति का प्रथम-अर्ध काल बीतने पर द्वितीयार्ध के प्रथम समय से संज्वलन लोभ के अनुभाग सत्त्व की कृष्टि करना प्रारंभ करता है ।

अभी तक जो संज्वलन लोभ के जघन्य स्पर्धक की शक्ति है, उससे कम अनुभाग नहीं होता था । कृष्टिकरण के द्वारा जघन्य स्पर्धक की जघन्य वर्गणा के भी नीचे अनुभाग किया जाता है ।

कांडकघात में अंतर्मुहूर्त में एक-एक फाली के द्वारा अनुभाग सत्त्व का घात होता है । परंतु कृष्टिकरण में प्रत्येक समय में अनुभाग-सत्त्व का अनंतगुणाहीन अनुभाग किया जाता है । यह 'कृष्टिघात' कहलाता है ।

www.JainKosh.org

स्पर्धक

वर्गणाओं के समूह को स्पर्धक कहते हैं ।

स्थिति की अपेक्षा निषेक संज्ञा होती है और अनुभाग को बताने के लिए स्पर्धक संज्ञा है ।

अनुभाग को समझने के लिए इसके अवयव बताते हैं ।

अविभाग-प्रतिच्छेद	वर्ग	वर्गणा	स्पर्धक	गुणहानि	नाना गुणहानि
लोभ आदि फलदान की शक्ति का अंश	अविभाग प्रतिच्छेदों का समूह	वर्गों का समूह	वर्गणाओं का समूह	स्पर्धकों का समूह	गुणहानियों का समूह

अनुभाग रचना

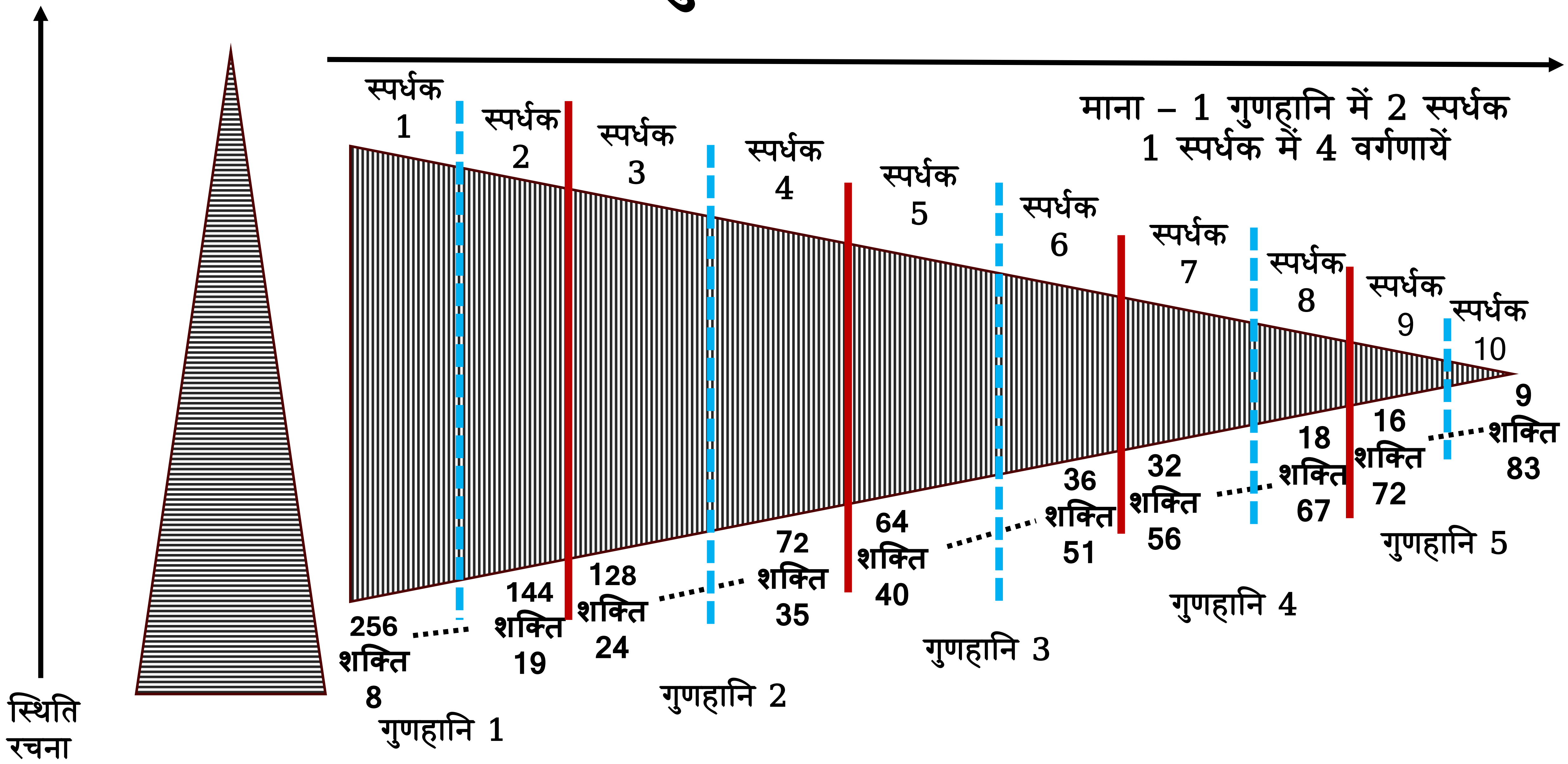
स्थिति रचना
स्पर्धक 1
स्पर्धक 2
स्पर्धक 3
स्पर्धक 4
स्पर्धक 5
स्पर्धक 6
स्पर्धक 7
स्पर्धक 8
स्पर्धक 9
स्पर्धक 10
माना – 1 गुणहानि में 2 स्पर्धक
1 स्पर्धक में 4 वर्गणायें
256 शक्ति 8
144 शक्ति 19
128 शक्ति 24
72 शक्ति 35
64 शक्ति 40
36 शक्ति 51
32 शक्ति 56
18 शक्ति 67
16 शक्ति 72
9 शक्ति 83
गुणहानि 1
गुणहानि 2
गुणहानि 3
गुणहानि 4
गुणहानि 5

शक्ति अपेक्षा वर्णन

जघन्य वर्गणा के 1 वर्ग में सबसे जघन्य शक्ति पायी जाती है । उसको संदृष्टि में ८ माना ।

अगली वर्गणा के 1 वर्ग की शक्ति इससे 1 अधिक पायी जाती है । संदृष्टि: ९

अगली वर्गणा के 1 वर्ग की शक्ति इससे 1 अधिक पायी जाती है । संदृष्टि: १०

ऐसे 1 स्पर्धक की प्रत्येक वर्गणा के 1-1 वर्ग की शक्ति एक-एक अविभाग-प्रतिच्छेद से बढ़ाना ।

उदाहरण में एक स्पर्धक की वर्गणा संख्या 4 मानी है ।

११

१० १०

९ ९ ९

८ ८ ८ ८

प्रथम स्पर्धक

यह स्पर्धक इस प्रकार से दर्शाया जाता है ।

१९

१८ १८

१७ १७ १७

१६ १६ १६ १६

द्वितीय स्पर्धक

द्वितीय स्पर्धक की प्रथम वर्गणा के 1 वर्ग की शक्ति जघन्य वर्ग से दुगुनी होती है ।

सूत्र: स्पर्धक के जघन्य वर्ग की शक्ति = जघन्य वर्ग × स्पर्धक की संख्या

द्वितीय स्पर्धक की जघन्य शक्ति = ८ × 2 = १६

इसके पश्चात् अगली-अगली वर्गणा के वर्ग एक-एक शक्ति से बढ़ते हैं ।

तृतीय स्पर्धक की जघन्य शक्ति = ८ × 3 = २४

चतुर्थ स्पर्धक की जघन्य शक्ति = ८ × 4 = ३२

ऐसे क्रम से अनंत स्पर्धकों में शक्ति बढ़ती-बढ़ती जानना ।

तृतीय स्पर्धक	चतुर्थ स्पर्धक	पंचम स्पर्धक
२७	३५	४३
२६ २६	३४ ३४	४२ ४२
२५ २५ २५	३३ ३३ ३३	४१ ४१ ४१
२४ २४ २४ २४	३२ ३२ ३२ ३२	४० ४० ४० ४०

पूर्व और अपूर्व स्पर्धक में अन्तर

पूर्व स्पर्धक

संसार-अवस्था में पाए जाने वाले कर्म की शक्ति समूहरूप

अपूर्व स्पर्धक

अनिवृत्तिकरण परिणामों से किए गए पूर्व स्पर्धकों की शक्ति के अनंतवें भाग शक्तिप्रमाण

JainKosh.o

स्पर्धक व कृष्टि में अन्तर

एक स्पर्धक से दूसरे स्पर्धक का अनुभाग थोड़ा ही अधिक है,

जबकि एक कृष्टि से दूसरी कृष्टि का अनुभाग अनन्त गुणा है ।

अनुभाग का क्रम

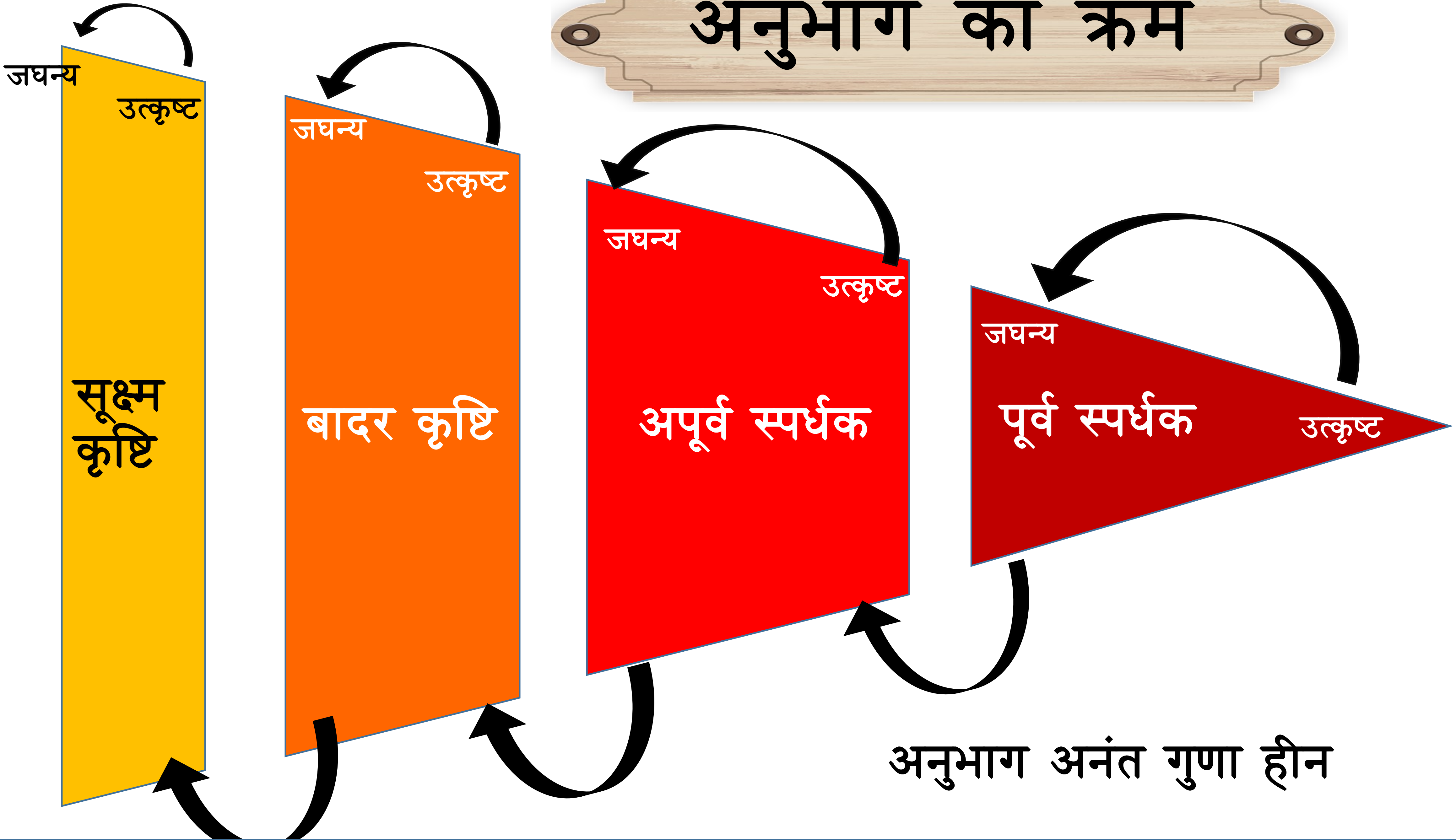

अनुभाग अनंत गुणा हीन

अपूर्व स्पर्धक, बादर कृष्टि और सूक्ष्म कृष्टि

अपूर्व स्पर्धक

- कषाय-नोकषाय सभी के होते हैं।

बादर कृष्टि

- संज्वलन क्रोध, मान, माया लोभ की होती है।

सूक्ष्म कृष्टि

- सिर्फ संज्वलन लोभ की होती है।

उपशम श्रेणी में सूक्ष्म कृष्टि ही होती है,

अपूर्व स्पर्धक और बादर कृष्टि नहीं की जाती।

www.JainKosh.org

संज्वलन लोभ की आदि-वर्गणा

संज्वलन लोभ के जघन्य स्पर्धक की आदि वर्गणा के एक-एक वर्ग (परमाणु) के अविभाग-प्रतिच्छेद = जीव राशि × अनंत हैं । १६ × ख ।

इन सभी जघन्य वर्गों के समूह को आदि-वर्गणा कहते हैं ।

सर्व संज्वलन लोभ का सत्त्व द्रव्य = स ∂ | १२ –
७ | ८

इसमें अनुभाग संबंधी 3/2 गुणहानि का भाग देने पर आदि वर्गणा का द्रव्य आता है ।

स ∂ | १२ –
७ | ८ | ख ख $\frac{3}{2}$ +

इसे लघु-संदृष्टि में ‘व’ कहते हैं ।

जघन्य वर्गणा में अनुभाग संबंधी दो गुणहानि का भाग देने पर चय (विशेष) आता है ।

स ∂ | १२ −

७ | ८ | ख ख $\frac{3}{2}$ + | ख ख 2 इसे लघुसंदृष्टि में ‘व वि’ लिखते हैं ।

जघन्य वर्गणा को अनुभाग संबंधी 1.5 गुणहानि से गुणा करने पर सर्व सत्त्व द्रव्य आता है । व १२+ अनुभाग संबंधी सत्त्व-द्रव्य को इसी संदृष्टि के द्वारा दिखाया जायेगा ।

इस सर्व सत्त्व द्रव्य से अपकर्षण करके जघन्य स्पर्धक की आदि वर्गणा के अविभाग-प्रतिच्छेदों से भी अनंत गुणाहीन अविभाग-प्रतिच्छेदों के द्वारा अनुभाग की सूक्ष्म-कृष्टि की जाती है ।

सूक्ष्म कृष्टियों की संख्या

प्रथम समय में की गयी सूक्ष्म कृष्टियों की संख्या एक स्पर्धक की वर्गणा शलाका का अनंतवां भाग प्रमाण है ।

एक स्पर्धक की वर्गणाओं की संख्या अभव्य राशि से अनंत गुणा और सिद्ध राशि का अनंतवा भाग प्रमाण है ।

एक स्पर्धक की वर्गणा की संदृष्टि= ४; उसका अनंतवां भाग = ४/ख

प्रथम समय में बनायी गई नवीन कृष्टियाँ

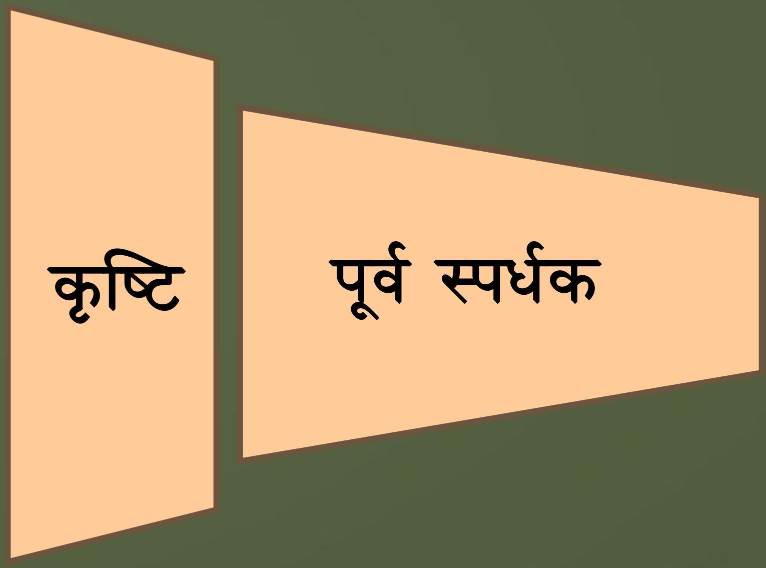

संज्वलन लोभ सत्त्व

ओक्कट्टिदइगिभागं, पल्लासंखेज्जखंडिदिगिभागं ।
देदि सुहुमासु किट्टिसु, फड्डयगे सेसबहुभागं ॥285॥

- अन्वयार्थ - (ओक्कट्टिदइगिभागं) अपकर्षण किये हुये एक भाग में (पल्लासंखेज्जखंडिदिगिभागं) पल्य के असंख्यातवें भाग से भाग देकर उसका एकभाग (सुहुमासु किट्टिसु) सूक्ष्म-कृष्टियों में (देदि) देता है।
- (सेसबहुभागं) शेष रहा बहुभाग (फड्डयगे) स्पर्धकों में देता है ॥285॥

कृष्टि द्रव्य का विभाग

कृष्टिकरण के प्रथम समय से अपकृष्ट द्रव्य का कृष्टियों में परिणमन होता है । वह इस प्रकार है –

$$\frac{\text{संज्वलन लोभ का सत्त्व द्रव्य}}{\text{अपकर्षण भागहार}} = \text{अपकृष्ट द्रव्य}$$

अपकृष्ट द्रव्य

$$\frac{\text{अपकृष्ट द्रव्य}}{\text{पल्य/असंख्यात}}$$

एक भाग द्रव्य,

कृष्टि हेतु

$$\frac{\text{अपकृष्ट द्रव्य}}{\text{पल्य/असंख्यात}} \times \left(\frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}} - 1\right)$$

बहुभाग द्रव्य,

पूर्व स्पर्धकों हेतु

संज्वलन द्रव्य = व १२+ यह अनुभाग की अपेक्षा संदृष्टि है । यहाँ इसका प्रयोग किया है क्योंकि अनुभागगत विभाजन बताना है ।

अपकृष्ट द्रव्य = $\frac{\text{व १२+}}{\text{ओ}}$ कृष्टियों का द्रव्य = $\frac{\text{व १२+}}{\text{ओ प}/\partial}$

यह एकभाग अपकृष्ट द्रव्य इस समय बनने वाली कृष्टियों में दिया जायेगा ।

चूंकि ये कृष्टियाँ एक गुणहानि प्रमाण नहीं है, एक स्पर्धक की वर्गणाशलाका का भी अनंतवां भाग मात्र हैं, इसलिये इनके द्रव्य का बंटवारा मध्यमधन आदि सूत्रों से होगा ।

सूत्र	संदृष्टि
कुल द्रव्य = $\frac{\text{व १२+}}{\text{ओ}\frac{\text{प}}{\partial}}$	गच्छ = कृष्टियों की संख्या = $\frac{\text{४}}{\text{ख}}$
मध्यमधन = $\frac{\text{सर्व द्रव्य}}{\text{गच्छ}}$	$\frac{\text{व १२ +}}{\text{ओ}\frac{\text{प}}{\partial}\frac{\text{४}}{\text{ख}}}$
चय = $\frac{\text{मध्यमधन}}{\text{निषेकहार} - \frac{\text{गच्छ}-1}{\text{२}}}$	$\frac{\text{व १२ +}}{\text{ओ}\frac{\text{प}}{\partial}\frac{\text{४}}{\text{ख}} \mid \text{१६} - \frac{(\text{४} - \text{१})}{\text{ख २}}}$
प्रथम कृष्टि द्रव्य = चय × निषेकहार	$\frac{\text{व १२ +} \mid \text{१६}}{\text{ओ}\frac{\text{प}}{\partial}\frac{\text{४}}{\text{ख}} \mid \text{१६} - \frac{(\text{४} - \text{१})}{\text{ख २}}}$

द्वितीय कृष्टि का द्रव्य

प्रथम कृष्टि से द्वितीय कृष्टि का द्रव्य एक चयहीन है ।

प्रथम कृष्टि का द्रव्य – चय = द्वितीय कृष्टि द्रव्य

$$= \frac{\text{व १२}+|\text{ १६}}{\text{ओ}\frac{\text{प}}{\partial}\frac{\text{४}}{\text{ख}}|\text{ १६}-\frac{(\text{४}-\text{१})}{\text{ख २}}} - \frac{\text{व १२}+}{\text{ओ}\frac{\text{प}}{\partial}\frac{\text{४}}{\text{ख}}|\text{ १६}-\frac{(\text{४}-\text{१})}{\text{ख २}}}$$

$$\frac{\text{व १२}+|\text{ १६ }-\text{१}}{\text{ओ}\frac{\text{प}}{\partial}\frac{\text{४}}{\text{ख}}|\text{ १६}-\frac{(\text{४}-\text{१})}{\text{ख २}}}$$

इसी प्रकार तृतीयादि कृष्टि से अंत की कृष्टि तक एक-एक चय कम द्रव्य दिया जाता है ।

चरम कृष्टि का द्रव्य

प्रथम कृष्टि द्रव्य – चय × (गच्छ – 1)

$$= \frac{\text{व १२+| १६}}{\text{ओ}\frac{\text{प}}{\partial}\frac{\text{४}}{\overline{\text{ख}}}\text{| १६–}\frac{(\text{४–१})}{\text{ख२}}} - \frac{\text{व १२+}}{\text{ओ}\frac{\text{प}}{\partial}\frac{\text{४}}{\overline{\text{ख}}}\text{| १६–}\frac{(\text{४–१})}{\text{ख२}}} \times \left(\frac{\text{४}}{\text{ख}} - 1\right)$$

$$= \frac{\text{व १२+| १६} - \left(\frac{\text{४}}{\text{ख}} - 1\right)}{\text{ओ}\frac{\text{प}}{\partial}\frac{\text{४}}{\overline{\text{ख}}}\text{| १६–}\frac{(\text{४–१})}{\text{ख२}}}$$

प्रथम कृष्टि का अनुभाग

इस समय कृष्टि प्रमाण द्रव्य का अनुभाग पूर्वस्पर्धक की जघन्य वर्ग की शक्ति से अनंतगुणाहीन है ।

चूंकि प्रत्येक कृष्टि उत्कृष्ट से जघन्य तक अनंतगुणाहीन है, अतः जघन्य कृष्टि का अनुभाग; पूर्व स्पर्धक के जघन्य वर्ग में कृष्टि गच्छ बार अनंत का भाग देने पर जो लब्ध हो, तत्प्रमाण होता है ।

कृष्टियों का अनुभाग

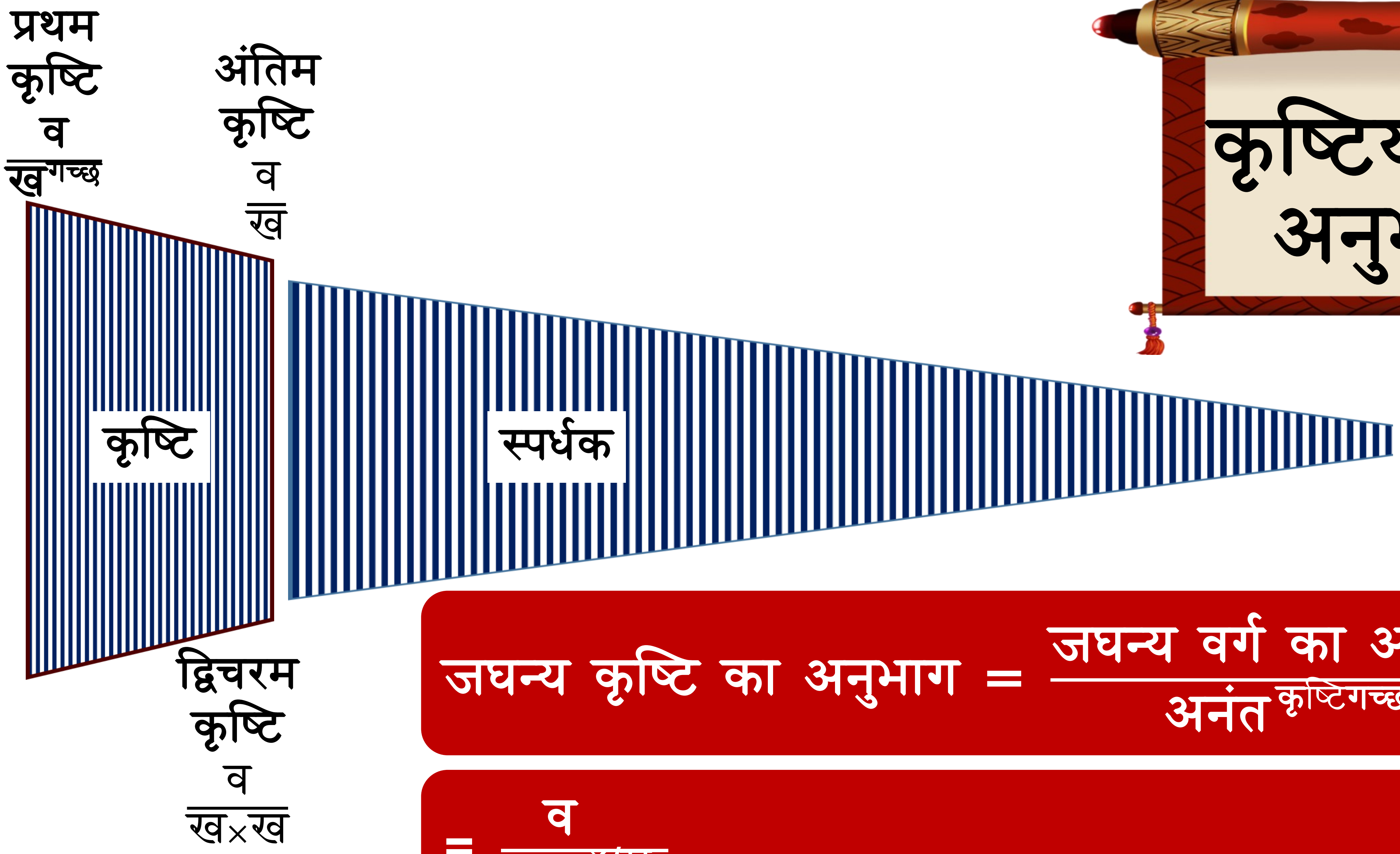

$$\text{जघन्य कृष्टि का अनुभाग} = \frac{\text{जघन्य वर्ग का अनुभाग}}{\text{अनंत}^{\text{कृष्टिगच्छ}}}$$

$$= \frac{\text{व}}{(\text{ख})^{४/\text{ख}}}$$

द्वितीयादि कृष्टि का अनुभाग

प्रथम कृष्टि के अनुभाग से द्वितीय कृष्टि का अनुभाग अनंत गुणा होता है ।

द्वितीय कृष्टि का अनुभाग = प्रथम कृष्टि का अनुभाग × अनंत

$$= \frac{व}{(ख)^{४/ख}} \times ख = \frac{व}{(ख)^{\frac{४}{ख}-1}}$$

ऐसे ही तृतीयादि कृष्टि का अनुभाग उत्तरोत्तर अनंत गुणा होता है ।

www.jainkosh.org

सूत्र द्वारा कृष्टि का अनुभाग

विवक्षित कृष्टि शलाका में से एक कम करें ।	यथा तीसरी कृष्टि का अनुभाग निकालना है । (विवक्षित कृष्टि – 1) = (3–1) = 2
लब्ध को कृष्टि गच्छ में से कम करें ।	कृष्टि गच्छ $- 2 = \frac{४}{ख} - 2$
लब्ध प्रमाण बार जघन्य वर्ग को अनंत का भाग दें ।	$\frac{व}{(ख)^{\frac{४}{ख} - 2}}$
प्राप्त लब्ध विवक्षित कृष्टि का अनुभाग है।	यह विवक्षित तीसरी कृष्टि का अनुभाग है।

www.JainKosh.org

अंतिम कृष्टि का अनुभाग

विवक्षित कृष्टि – 1 = $\frac{४}{ख} - 1$

इसे कृष्टि गच्छ में से घटाने पर

$\frac{४}{ख} - (\frac{४}{ख} - 1) = \frac{४}{ख} - \frac{४}{ख} + 1 = 1$

याने एक बार जघन्य वर्ग में अनंत का भाग लगाने पर चरम कृष्टि का अनुभाग होता है ।

$\frac{व}{(ख)^1}$ = चरम कृष्टि का अनुभाग

यही पूर्व में कहा था कि पूर्व स्पर्धक की आदि वर्गणा की शक्ति से चरम कृष्टि का अनुभाग अनंत गुणाहीन है । वही यहाँ सिद्ध हुआ ।

बहुभाग द्रव्य का पूर्व स्पर्धकों में बंटवारा

जो बहुभाग अपकृष्ट द्रव्य है, वह पूर्व स्पर्धकों में दिया जाता है । जघन्य वर्गणा से लेकर अतिस्थापना प्राप्त होने तक द्रव्य चयहीन क्रम से निक्षिप्त किया जाता है ।

पूर्व स्पर्धकों का द्रव्य अनंत गुणहानियों में स्थित है । अत: अपकृष्ट द्रव्य के विभाजन के लिये ‘डेढ़ गुणहानि से भाग’ आदि सूत्रों का प्रयोग किया जायेगा ।

$$\text{सर्व द्रव्य} = \frac{\text{व}\ \text{१२}_{+|}\left(\frac{\text{प}}{\partial}-1\right)}{\text{ओ}\ \frac{\text{प}}{\partial}}$$

अनुभाग संबंधी डेढ़ गुणहानि = १२

$$\text{प्रथम वर्गणा में देय द्रव्य} = \frac{\text{सर्व द्रव्य}}{\frac{3}{2}\,\text{गुणहानि}_{+}} = \frac{\text{व}\ \text{१२}_{+|}\left(\frac{\text{प}}{\partial}-1\right)}{\text{ओ}\ \frac{\text{प}}{\partial}\ |\ \text{१२}_{+}}$$

$$\text{चय} = \frac{\text{प्रथम निषेक}}{\text{दो गुणहानि}} = \frac{\text{व}\ \text{१२}_{+|}\left(\frac{\text{प}}{\partial}-1\right)}{\text{ओ}\ \frac{\text{प}}{\partial}\ |\ \text{१२}_{+}\ |\ \text{१६}}$$

इस एक चय को प्रथमादि वर्गणा में से कम करते हुए द्वितीयादि वर्गणा का द्रव्य होता है ।

द्वितीय आदि गुणहानियों में द्रव्य

ऐसे चयहीन द्रव्य तब तक दिया जाता है, जब तक कि द्वितीय गुणहानि की प्रथम वर्गणा प्राप्त नहीं हो जाती ।

पूर्व चय को आधा करने पर द्वितीय गुणहानि का चय प्राप्त होता है ।

इस चय को द्वितीय गुणहानि की प्रथमादि वर्गणा में से हीन करने पर द्वितीयादि वर्गणा का प्रमाण होता है । यह द्रव्य पूर्व गुणहानि के द्रव्य से आधा-आधा होता है ।

ऐसे चयहीन द्रव्य तृतीय गुणहानि की प्रथम वर्गणा प्राप्त होने तक दिया जाता है ।

पुनः चय आधा होता है । चयहीन क्रम से गुणहानि में द्रव्य दिया जाता है । ऐसे अंतिम गुणहानि की अंतिम वर्गणा तक द्रव्य का बंटवारा जानना चाहिए ।

द्रव्य का अल्प-बहुत्व

जघन्य कृष्टि से चरम कृष्टि तक का द्रव्य एक-एक चयहीन है ।

सूक्ष्म कृष्टियों की अंतिम कृष्टि में निक्षिप्त द्रव्य से पूर्व स्पर्धक की आदि वर्गणा में निक्षिप्त द्रव्य अनंत गुणाहीन है ।

पूर्व स्पर्धक की आदि वर्गणा से द्वितीयादि वर्गणा में एक-एक चयहीन द्रव्य दिया है ।

प्रश्न – पूर्व स्पर्धकों में तो बहुभाग द्रव्य दिया जाता है, तब चरम कृष्टि के द्रव्य से आदि वर्गणा का द्रव्य अनंत गुणाहीन कैसे है ?

उत्तर – कृष्टियों की संख्या अत्यल्प है, मात्र एक वर्गणा शलाका का अनंतवां भाग है । परंतु पूर्व स्पर्धक अनंत गुणहानिरूप हैं । अतः बहुभाग द्रव्य पूर्व स्पर्धकों को देने पर भी एक-एक वर्गणा को अत्यल्प द्रव्य प्राप्त होता है। अतः चरम कृष्टि से आदि वर्गणा का द्रव्य अनंत गुणा हीन होना युक्तिसंगत है ।

www.JainKosh.org

पडिसमयमसंखगुणा, दव्वादु असंखगुणविहीणकमे ।
पुव्वगहेट्ठा हेट्ठा, करेदि किट्टिं स चरिमो त्ति ॥286॥

- अन्वयार्थ- कृष्टिकरणकाल में (स) वह जीव द्वितीय समय से (चरिमो त्ति) अंतिम समय तक (पडिसमयं) प्रत्येक समय में (असंखगुणा दव्वादु) असंख्यातगुणे द्रव्य से (असंखगुणविहीणकमे) असंख्यातगुणे हीनक्रम से (पुव्वगहेट्ठा हेट्ठा) पूर्व कृष्टि के नीचे-नीचे (किट्टिं) कृष्टि (करेदि) करता है ॥286॥

द्वितीयादि समयों में कृष्टिकरण

कृष्टिकरण के द्वितीयादि समयों में भी नवीन अपूर्व कृष्टियाँ बनायी जाती हैं ।

विशुद्धि बढ़ने के कारण अपकृष्ट द्रव्य प्रत्येक समय असंख्यात गुणा लिया जाता है ।

पूर्व समय में की गयी कृष्टियों के नीचे नवीन कृष्टियाँ बनायी जाती हैं । इन्हें अपूर्व कृष्टि कहते हैं।

पूर्व कृष्टियों से अपूर्व कृष्टियों की संख्या असंख्यात गुणाहीन होती है ।

अपकृष्ट द्रव्य का बंटवारा

"संज्वलन लोभ के पूर्व-स्पर्धकरूप द्रव्य से अपकर्षण करके द्रव्य इस प्रकार बांटा जाता है–"

$$\frac{\text{पूर्व स्पर्धक} \times \partial}{\text{ओ}}$$

अपकृष्ट द्रव्य,
पूर्व से असंख्यात गुणा

एक भाग द्रव्य, कृष्टि हेतु

$$\frac{\text{अपकृष्ट द्रव्य}}{\text{पल्य/असंख्यात}}$$

- एकभाग द्रव्य, अपूर्व कृष्टि हेतु
- बहुभाग द्रव्य, पूर्व कृष्टि हेतु

बहुभाग द्रव्य, पूर्व स्पर्धकों हेतु

$$\frac{\text{अपकृष्ट द्रव्य}}{\text{पल्य/असंख्यात}} \times \left(\frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}} - 1\right)$$

कृष्टि हेतु प्राप्त द्रव्य अपूर्व कृष्टि एवं पूर्व कृष्टि दोनों में दिया जाता है ।

बहुभाग द्रव्य को पूर्व स्पर्धकों में पूर्ववत् दिया जाता है ।

अपूर्व कृष्टियों का अनुभाग

पूर्व जघन्य कृष्टि के अनुभाग से चरम अपूर्व कृष्टि का अनुभाग अनंत गुणा हीन होता है ।

चरम अपूर्व कृष्टि से द्विचरम अपूर्व कृष्टि का अनुभाग अनंत गुणाहीन होता है ।

इस प्रकार जघन्य अपूर्व कृष्टि तक अनंत गुणाहीन अनुभाग जानना ।

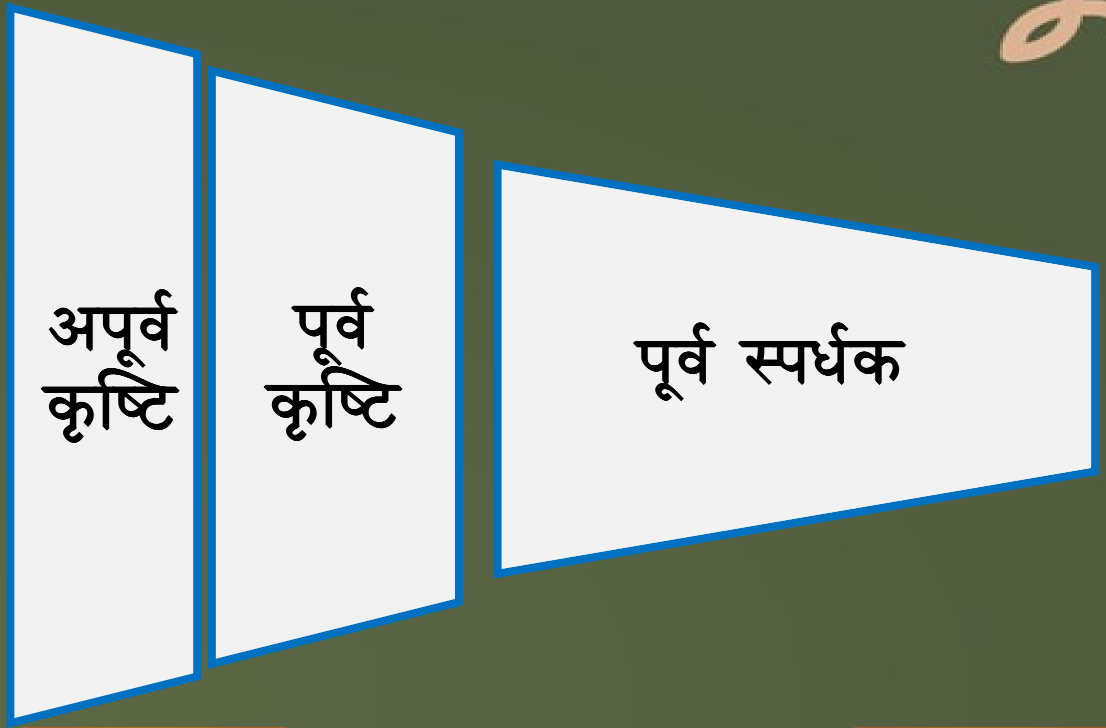

इस प्रकार तृतीयादि समयों से चरम समय तक अपकृष्ट द्रव्य असंख्यात गुणा, अपूर्व कृष्टियाँ, उनका अनुभाग, पूर्व-अपूर्व कृष्टि में द्रव्य का विभाजन आदि जानना चाहिए ।

www.JainKosh.org

भिन्न समयों में अपकृष्ट कृष्टि द्रव्य का उदाहरण-

मानाकि असंख्यात = 5

समय	प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ	पंचम
अपकृष्ट द्रव्य	10,000	50,000	2,50,000	12,50,000	62,50,000
कृष्टि संख्या	100	80	60	40	20

हेट्ठासीसे उभयग-दव्वविसेसे य हेट्ठकिट्टिम्मि ।
मज्झिमखंडे दव्वं, विभज्ज विदियादिसमयेसु ॥287॥

- अन्वयार्थ - (विदियादिसमयेसु) द्वितीयादि समयों में (दव्वं) अपकर्षित द्रव्य (हेट्ठासीसे) अधस्तनशीर्ष में (उभयगदव्वविसेसे) उभयद्रव्यविशेष में, (हेट्ठकिट्टिम्मि) अधस्तनकृष्टी में (य) और (मज्झिमखंडे) मध्यमखण्ड में (विभज्ज) विभाग करके देता है ॥287॥

द्वितीय समय में पूर्व कृष्टि के नीचे नवीन कृष्टियाँ बनायी जा रही हैं ।

पूर्व गोपुच्छ के साथ इनका द्रव्य गोपुच्छाकार होना चाहिये ।

इस गोपुच्छा को बनाने के लिये अपकृष्ट द्रव्य के चार विभाग हैं।

1.अधस्तन शीर्षविशेष

2.अधस्तन अपूर्वकृष्टि

3.उभयद्रव्य विशेष

4.मध्यमखंड

www.JainKosh.org

1) अधस्तन-शीर्षविशेष द्रव्य

पूर्व समय में की गयी कृष्टियों में द्रव्य उत्तरोत्तर एक-एक चय हीन है।

पूर्व-कृष्टियों में जो चय का प्रमाण है उतना द्वितीय कृष्टि में एक चय, तृतीय कृष्टि में दो चय, चौथी कृष्टि में तीन चय — इस प्रकार क्रम से एक-एक बढ़ते चयक्रम से द्वितीयादि कृष्टियों में मिलाने पर सर्व पूर्व कृष्टियाँ प्रथम पूर्व कृष्टि के समान होती हैं।

इस प्रकार सर्व पूर्व कृष्टियाँ; प्रथम पूर्व कृष्टि के समान बनाने के लिए जितना द्रव्य दिया जाता है, उसको अधस्तन-शीर्षविशेष द्रव्य कहते हैं।

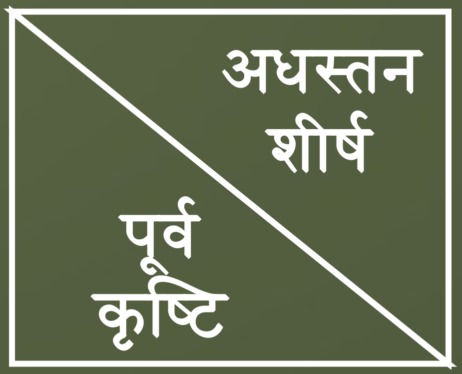

अंकसंदृष्टि से मानाकि प्रथम समय में की गयी कृष्टियाँ = 8; प्रथम समय का अपकृष्ट द्रव्य =200

मध्यमधन = $\frac{\text{पूर्वसमयकृत कृष्टिद्रव्य}}{\text{कृष्टि गच्छ}}$

पूर्वकृष्टि का चय

= $\frac{\text{मध्यमधन}}{\text{दो गुणहानि} - \frac{(\text{गच्छ} - 1)}{2}}$

प्रथम कृष्टि का द्रव्य = चय x निषेकहार

$\frac{200}{8}$ = 25 मध्यमधन;

$\frac{25}{16 - \frac{(8-1)}{2}} = \frac{25}{16 - \frac{7}{2}} = \frac{25}{\frac{32 - 7}{2}}$

= $\frac{25}{\frac{25}{2}}$ = 2 (चय का प्रमाण)

2 x 16 = 32 आदि का प्रमाण

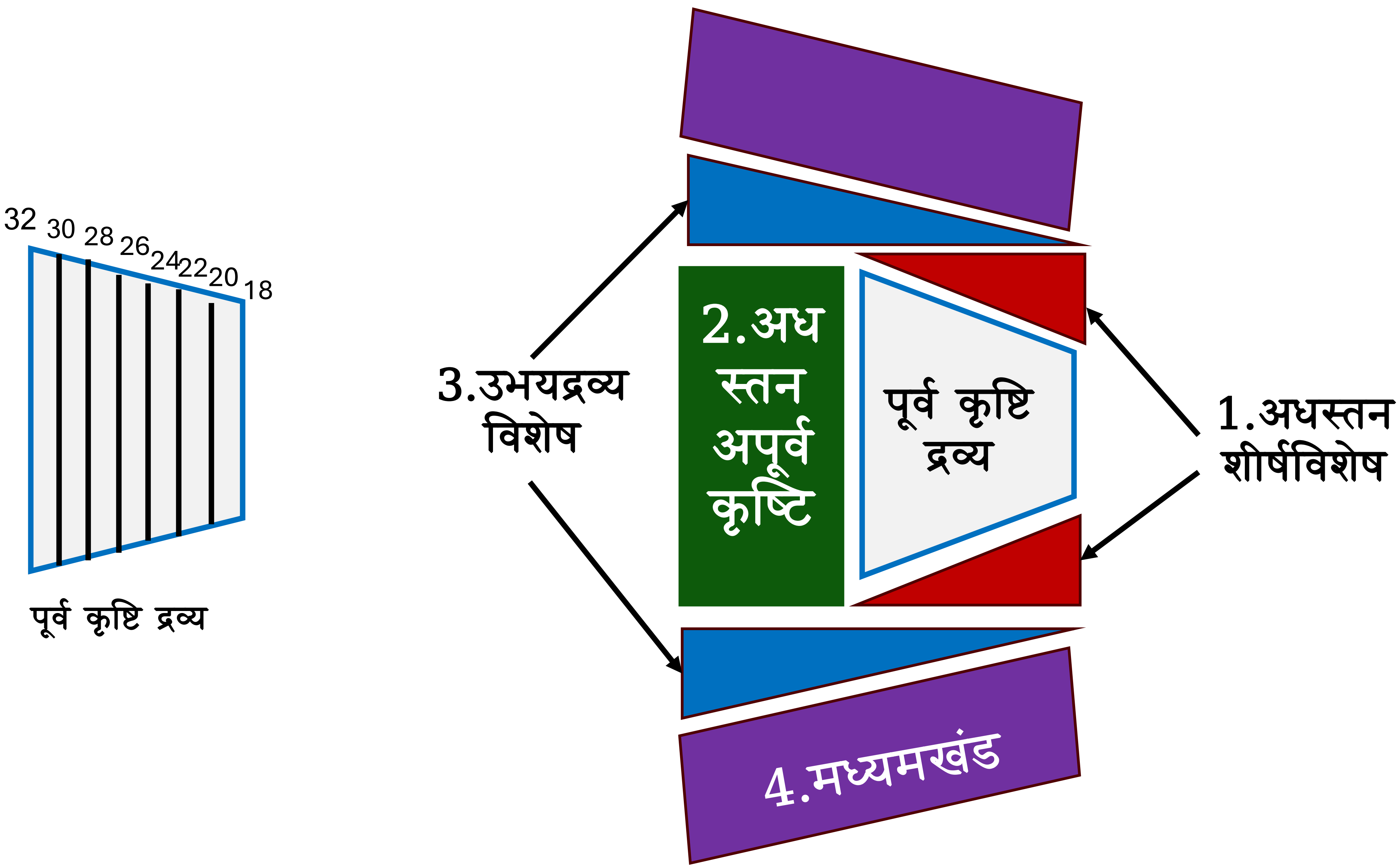

www.JainKosh.org

समस्त अधस्तन शीर्ष विशेष

समस्त अधस्तनशीर्ष विशेष निकालने का सूत्र

= [{(पद – 1)/2 × चय} + आदि] × पद

[{(7 – 1) /2 × 2} + 2] × 7

= [{6 /2 × 2} + 2] × 7

= [6 + 2] × 7 = 8 × 7 = 56

अंक-संदृष्टि में कुल अधस्तन-शीर्षविशेष द्रव्य 56 जानना ।

अथवा (गच्छ – 1)/2 × गच्छ × चय

= (8–1)/2 × 8 × 2 = 7 × 4 × 2 = 56

अधस्तन शीर्ष विशेष पर पूर्व कृष्टियाँ

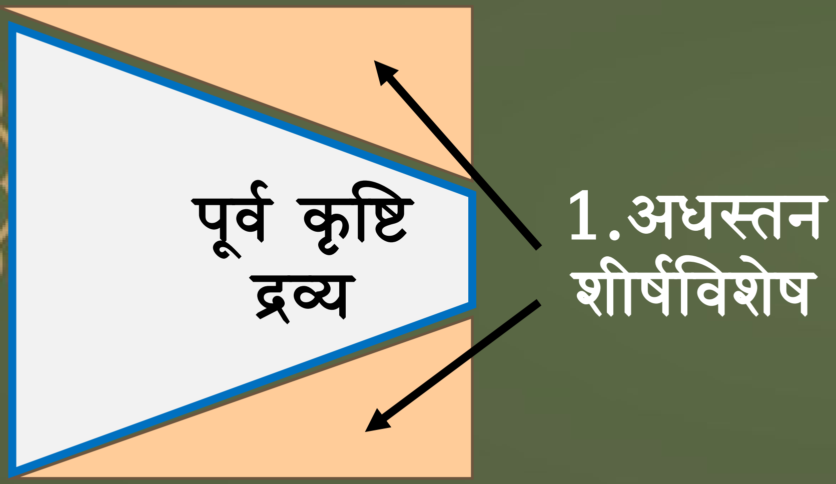

कृ.क्र.	पूर्वकृष्टि का द्रव्य	अधस्तनशीर्षविशेषद्रव्य	सर्वत्र समद्रव्य
८	१८	७ x २ = १४	३२
७	२०	६ x २ = १२	३२
६	२२	५ x २ = १०	३२
५	२४	४ x २ = ८	३२
४	२६	३ x २ = ६	३२
३	२८	२ x २ = ४	३२
२	३०	१ x २ = २	३२
१	३२		३२
		कुल द्रव्य= ५६	

2) अधस्तन अपूर्वकृष्टिद्रव्य

पूर्व-कृष्टियों में प्रथम कृष्टि का जितना प्रमाण है उतना ही द्रव्य दूसरे समय में की गई प्रत्येक अपूर्वकृष्टि में समपट्टिकारूप दिया जाता है । इस समपट्टिकारूप द्रव्य को अधस्तन अपूर्वकृष्टिद्रव्य कहते हैं।

यह द्रव्य देने पर अपूर्वकृष्टियाँ प्रथम पूर्वकृष्टि के समान होती हैं।

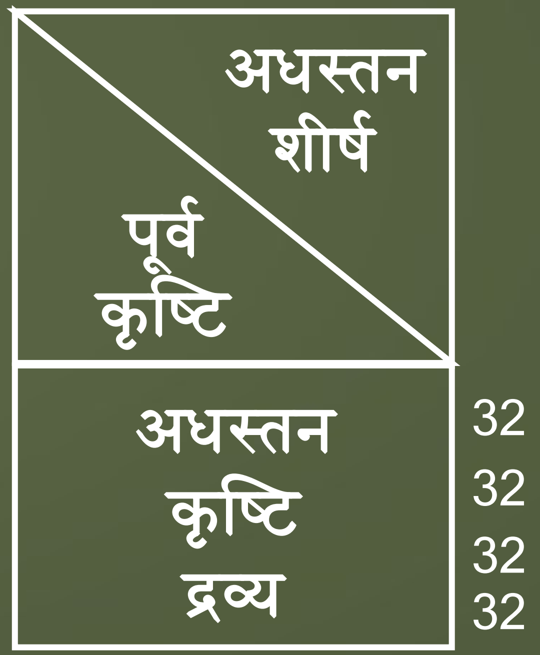

2) अधस्तन अपूर्वकृष्टिद्रव्य - अंकसंदृष्टि

अंकसंदृष्टि से अपूर्वकृष्टियों का प्रमाण = 4; प्रथम पूर्वकृष्टि के द्रव्य का प्रमाण = 32

अपूर्वकृष्टियों का प्रमाण = पूर्वकृष्टियों का प्रमाण / (अपकर्षणभागहार × असंख्यात)

यहाँ असंख्यातगुणा अपकर्षण भागहार का प्रमाण 2 माना है। इसलिए 8/2 = 4 अपूर्वकृष्टियों का प्रमाण है ।

अधस्तन अपूर्वकृष्टिद्रव्य = प्रथम पूर्वकृष्टि का द्रव्य × अपूर्व-कृष्टियों का प्रमाण = 32 × 4 = 128

3) उभयद्रव्यविशेष द्रव्य

पूर्व-अपूर्व कृष्टियों में चयहीन क्रमरूप गोपुच्छ करने के लिए उभयकृष्टि संबंधी चय का प्रमाण लाकर अंतिम पूर्वकृष्टि में एक चय; उसके नीचे उपान्त्य कृष्टि में दो चय; इस क्रम से एक-एक चय अधिक-अधिक करते हुए प्रथम अपूर्वकृष्टि तक देना।

इस दिये गए सर्व द्रव्य को उभयद्रव्यविशेष द्रव्य कहते हैं।

यह देने पर पूर्व-अपूर्व कृष्टियाँ एक गोपुच्छाकाररूप होती हैं।

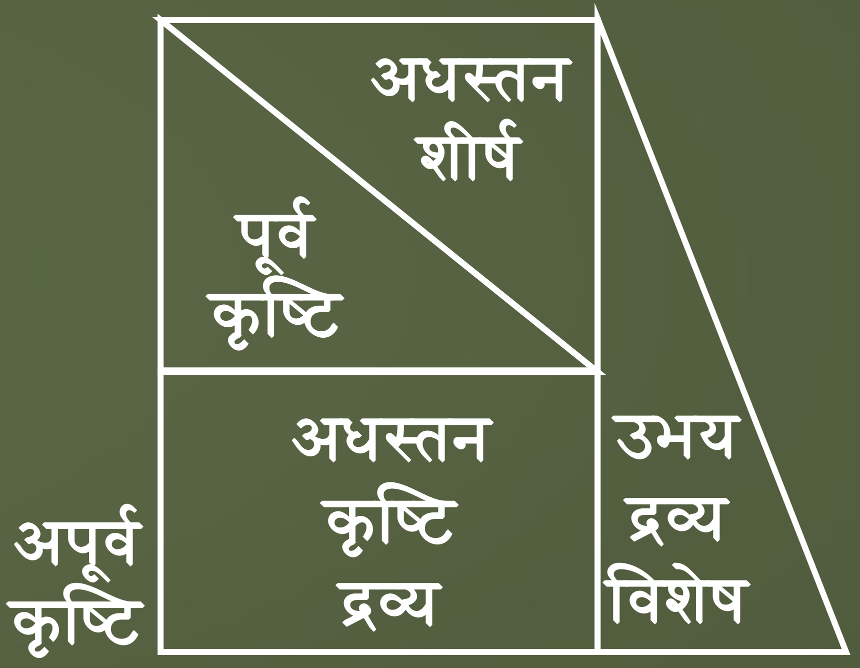

3) उभयद्रव्यविशेष द्रव्य

एक उभयद्रव्यविशेष का प्रमाण प्राप्त करने के लिए पूर्वकृष्टि का और अपूर्वकृष्टि का द्रव्य मिलकर जो द्रव्य आया, उसमें पूर्व-अपूर्व कृष्टियों के जोड़रूप गच्छ से भाग देने पर मध्यम धन आता है।

इसमें एक कम गच्छ के आधे से हीन दो गुणहानि से भाग देने पर चय का प्रमाण आता है।

प्रथम समय और द्वितीय समय में बनायी कृष्टियों का एक गोपुच्छ बनाना है, इसलिये पूर्व-कृष्टि और अपूर्व-कृष्टि दोनों को जोड़कर चय का प्रमाण निकाला जा रहा है ।

यद्यपि पूर्व कृष्टि द्रव्य और अपूर्व कृष्टि द्रव्य दोनों को जोड़कर चय निकाला है तथापि यह द्रव्य वर्तमान के अपकृष्ट द्रव्य से ही लिया जाता है, पूर्व अपकृष्ट द्रव्य तो पूर्व समय में ही बाँट दिया गया था ।

जैसे – अंक संदृष्टि से दूसरे समय में अपकृष्ट द्रव्य =4240 माना।

पूर्व-अपूर्व कृष्टियों का द्रव्य = पूर्वकृष्टि द्रव्य + अपूर्वकृष्टि द्रव्य

= 200 + 4240 = 4440

पूर्व-अपूर्व कृष्टियों का प्रमाण = पूर्वकृष्टियाँ + अपूर्वकृष्टियाँ

= 8 + 4 = 12

मध्यमधन = पूर्वापूर्व कृष्टि द्रव्य / पूर्वापूर्व कृष्टियों का आयाम

= 4440 / 12 = 370

चय = मध्यमधन / {दो गुणहानि – (गच्छ–1) / 2}

$$\frac{370}{24 - \frac{(12-1)}{2}} = \frac{370}{24 - \frac{11}{2}} = \frac{370}{\frac{48 - 11}{2}} = \frac{370}{\frac{37}{2}} = 10 \times 2 = 20$$

www.JainKosh.org

कुल उभयद्रव्य विशेषद्रव्य

कुल उभयद्रव्यविशेषद्रव्य निकालने का सूत्र

= [{(पद–1)/2 × चय} + आदि] × पद

पद = 12; चय = 20; आदि = 20

[{(12–1)/2 × 20} + 20] × 12

[{11/2 × 20} + 20] × 12

[110 + 20] × 12

130 × 12 = 1560 समस्त उभयद्रव्यविशेष द्रव्य

www.JainKosh.org

3) उभयद्रव्यविशेष द्रव्य

समपट्टिका द्रव्य

उभयद्रव्यविशेष

	कृ.क्र.	समपट्टिका द्रव्य	उभयद्रव्यविशेषद्रव्य	कुल द्रव्य
चरम पूर्वकृष्टि →	८	३२	१ x २० = २०	५२
द्विचरमपूर्वकृष्टि →	७	३२	२ x २० = ४०	७२
	६	३२	३ x २० = ६०	९२
	५	३२	४ x २० = ८०	११२
	४	३२	५ x २० = १००	१३२
	३	३२	६ x २० = १२०	१५२
	२	३२	७ x २० = १४०	१७२
प्रथम पूर्वकृष्टि →	१	३२	८ x २० = १६०	१९२
अंतिम अपूर्वकृष्टि →	४	३२	९ x २० = १८०	२१२
	३	३२	१० x २० = २००	२३२
	२	३२	११ x २० = २२०	२५२
प्रथम अपूर्वकृष्टि →	१	३२	१२ x २० = २४०	२७२

4) मध्यमखंड द्रव्य

विवक्षित समय में कृष्टि के लिए अपकृष्ट द्रव्य में से अधस्तनशीर्षविशेष द्रव्य, अधस्तन कृष्टिद्रव्य और उभयद्रव्यविशेष द्रव्य घटा करके जो शेष द्रव्य रहा, उसे सर्व पूर्व-अपूर्व कृष्टियों में समान विभाग करके दिया जाता है । यह शेष रहा द्रव्य मध्यमखंड द्रव्य कहलाता है।

यह द्रव्य देने पर सर्व अपकृष्ट द्रव्य समाप्त होता है और पूर्व-अपूर्व कृष्टियों में चयहीन क्रम से द्रव्य रहता है।

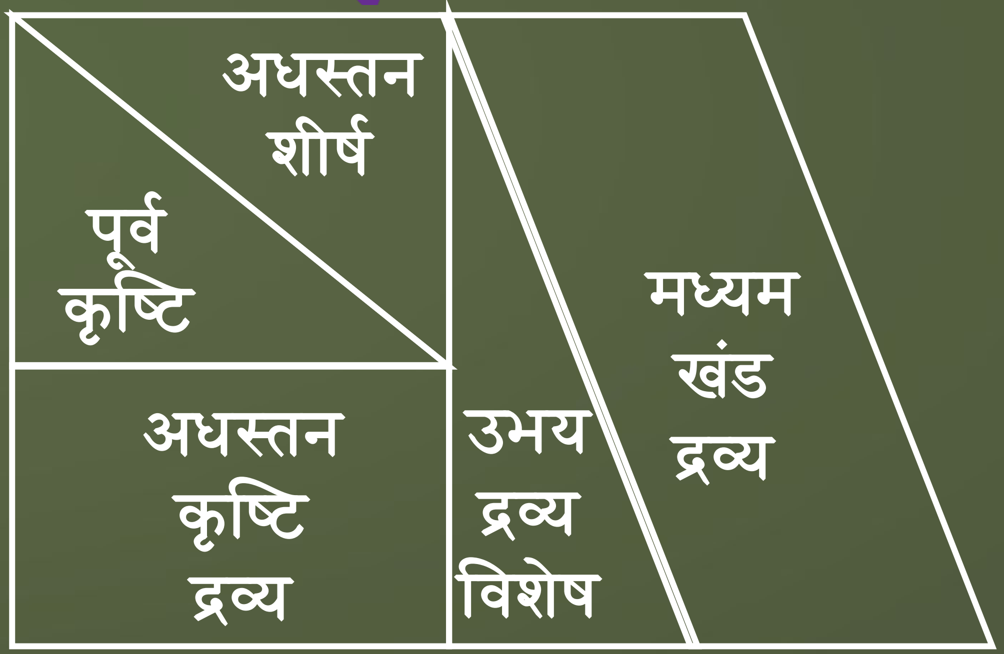

sh.org

4) मध्यमखंड द्रव्य

जैसे- द्वितीय समय में अपकृष्ट द्रव्य = 4240,

मध्यमखंडद्रव्य = द्वितीय समय में अपकृष्ट द्रव्य – (अधस्तन-शीर्षविशेष द्रव्य + अधस्तन-अपूर्वकृष्टि द्रव्य + उभयद्रव्यविशेष द्रव्य)

= 4240 – (56 + 128 + 1560)

= 4240 – 1744 = 2496 संपूर्ण मध्यमखंड द्रव्य

समस्त मध्यमखंडद्रव्य / पूर्व-अपूर्व कृष्टि आयाम = एक मध्यमखंडद्रव्य

2496 / 12 = 208

इतना द्रव्य पूर्व-अपूर्व कृष्टियों की प्रत्येक कृष्टि में प्राप्त होता है।

4) मध्यमखंड द्रव्य

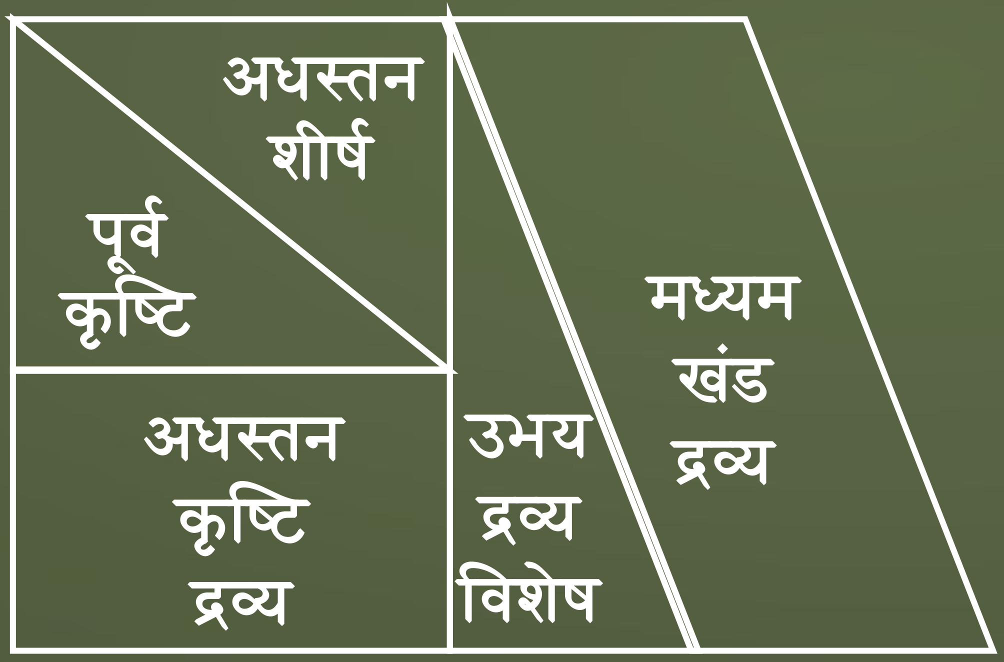

कृ. क्र.	प्राप्त हुआ सर्वद्रव्य
१२	५२+२०८=२६०
११	७२+२०८=२८०
१०	९२+२०८=३००
९	११२+२०८=३२०
८	१३२+२०८=३४०
७	१५२+२०८=३६०
६	१७२+२०८=३८०
५	१९२+२०८=४००
४	२१२+२०८=४२०
३	२३२+२०८=४४०
२	२५२+२०८=४६०
१	२७२+२०८=४८०

अधस्तन शीर्ष द्रव्य – अर्थ संदृष्टि

पूर्व कृष्टि का चय $= \dfrac{\text{व १२+}}{\text{ओ}\frac{\text{प}}{\text{ə}}\frac{\text{४}}{\text{ख}} \mid \text{१६} - \frac{(\text{४}-\text{१})}{\text{ख २}}}$

चयधन $= \dfrac{\text{गच्छ}-1}{\text{२}} \times \text{गच्छ} \times \text{चय}$

$\dfrac{\text{४} - 1}{\text{ख } 2} \times \dfrac{\text{४}}{\text{ख}} \times \dfrac{\text{व १२+}}{\text{ओ}\frac{\text{प}}{\text{ə}}\frac{\text{४}}{\text{ख}} \mid \text{१६} - \frac{(\text{४}-\text{१})}{\text{ख २}}}$

यह संपूर्ण अधस्तनशीर्ष विशेष द्रव्य है ।

2) अधस्तन कृष्टि द्रव्य

अपूर्वकृष्टि का आयाम $= \dfrac{\text{पूर्व कृष्टि का आयाम}}{\text{अपकर्षण भागहार} \times \text{असंख्यात}} = \dfrac{\text{४}}{\text{ख ओ } \partial}$

पूर्व कृष्टि में जघन्य कृष्टि द्रव्य $= \dfrac{\text{व १२+ | १६}}{\text{ओ}\frac{\text{प}}{\partial}\frac{\text{४}}{\text{ख}} \text{ | १६} - \frac{(\text{४}-\text{१})}{\text{ख २}}}$

इतना द्रव्य प्रत्येक अपूर्व कृष्टि में देना है । अतः कुल अधस्तन कृष्टि द्रव्य =

अपूर्व कृष्टि आयाम × पूर्व जघन्य कृष्टि द्रव्य $= \dfrac{\text{४}}{\text{ख ओ } \partial} \times \dfrac{\text{व १२+ | १६}}{\text{ओ}\frac{\text{प}}{\partial}\frac{\text{४}}{\text{ख}} \text{ | १६} - \frac{(\text{४}-\text{१})}{\text{ख २}}}$

3) उभय द्रव्य विशेष

प्रथम समय का कृष्टि द्रव्य+ द्वितीय समय का कृष्टि द्रव्य

- $\frac{\text{व १२} +}{\text{ओ} \frac{\text{प}}{\partial}} + \frac{\text{व १२} + \text{।} \partial}{\text{ओ} \frac{\text{प}}{\partial}} = \frac{\text{व १२} + \text{।} (\partial + 1)}{\text{ओ} \frac{\text{प}}{\partial}}$

प्रथम समय का कृष्टि आयाम + द्वितीय समय का कृष्टि आयाम

- $\frac{\text{४}}{\text{ख}} + \frac{\text{४}}{\text{ख । ओ} \partial} = \frac{\text{४}}{\text{ख}}+$

मध्यमधन =

- $\frac{\text{सर्वद्रव्य}}{\text{गच्छ}} = \frac{\text{व १२+ ।} (\partial+1)}{\text{ओ} \frac{\text{प}}{\partial} \text{।} \frac{\text{४}}{\text{ख}}+}$

चय =

- $\frac{\text{मध्यमधन}}{\text{निषेकहार} - \frac{\text{गच्छ} - 1}{2}} = \frac{\text{व १२+ ।} (\partial+1)}{\text{ओ} \frac{\text{प}}{\partial} \text{।} \frac{\text{४}}{\text{ख}} + \text{। १६} - (\frac{\text{४}}{\text{ख २}} - 1)}$

www.JainKosh.org

यह चय अंतिम कृष्टि से प्रथम कृष्टि तक एक-एक अधिक क्रम से देना है । अतः सर्व चयों का जोड़ संकलनधन सूत्र से निकालते हैं ।

$$\text{सर्व चयधन} = \text{चय} \times \text{गच्छ} \times \frac{\text{गच्छ}+1}{\text{२}}$$

$$= \frac{\text{व १२}+ \mid (\partial+1)}{\text{ओ} \frac{\text{प}}{\partial} \mid \frac{\text{४}}{\text{ख}}^{+\mid} \text{१६}-(\frac{\text{४}-1}{\text{ख २}})} \times \frac{\text{४}}{\text{ख}}+ \times \frac{\text{४}+1}{\text{ख २}}$$

यह कुल उभयद्रव्य विशेष द्रव्य है, जो पूर्व-अपूर्व कृष्टियों में दिया जाता है । इससे सारी कृष्टियाँ गोपुच्छाकार हो जाती हैं ।

4) मध्यमखंड

पूर्वोक्त तीन द्रव्यों को अपकृष्ट द्रव्य में से कम करने पर शेष द्रव्य मध्यमखंड द्रव्य है ।

तीन द्रव्य कम करने के लिए तीन बार ऋण की संदृष्टि की है ।

मध्यम खंड द्रव्य

- $\dfrac{\text{व १२+ | ∂}}{\text{ओ प } \partial} \equiv$

इसे सारी पूर्व-अपूर्व कृष्टियों में समान रूप से देना है ।

अत: इस मध्यमखंड द्रव्य को पूर्व-अपूर्व कृष्टि गच्छ से भाग देने पर एक-एक कृष्टि को प्राप्त मध्यमखंड का प्रमाण होता है ।

एक मध्यम खंड द्रव्य

- $\dfrac{\text{व १२+ | ∂}}{\text{ओ प ४ } \partial \text{ ख}^{+}} \equiv$

www.JainKosh.org

चारों द्रव्य निक्षिप्त करने पर गोपुच्छाकार कृष्टियाँ

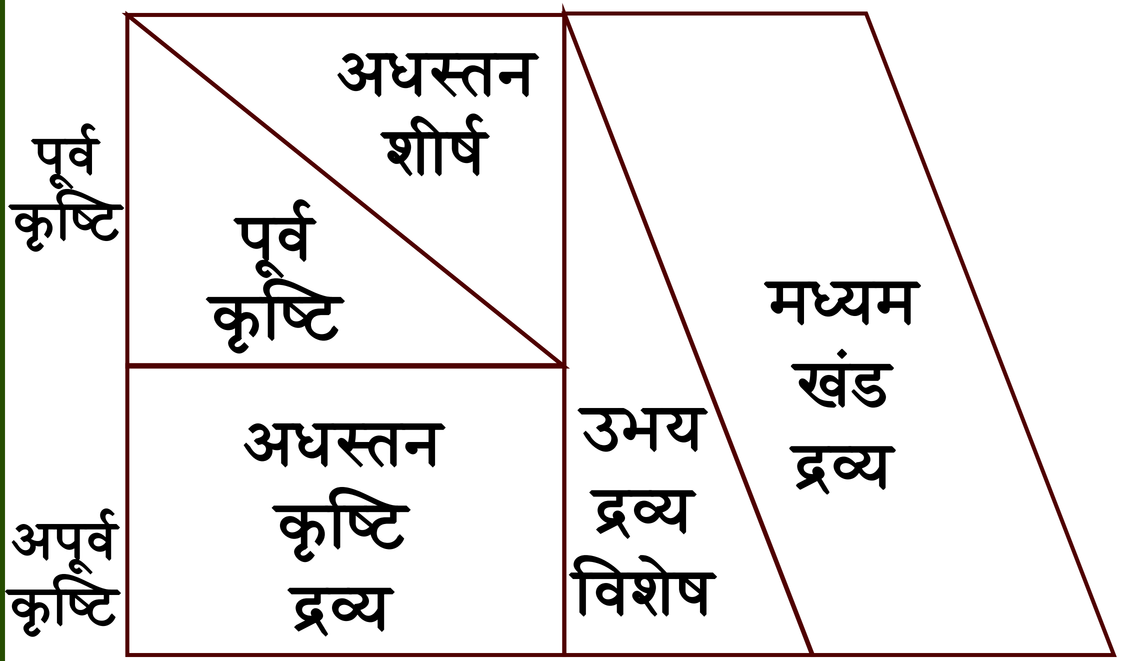

द्रव्य	कहाँ दिया	कितना दिया ?
अधस्तन शीर्ष विशेष द्रव्य	पूर्वकृत कृष्टियों में	नीचे से ऊपर तक, 1-1 चय अधिक
अधस्तन कृष्टि द्रव्य	नवीन कृष्टियों में	प्रत्येक कृष्टि में समान
उभय द्रव्य विशेष	पूर्व-अपूर्व कृष्टियों में	ऊपर से नीचे तक, 1-1 चय अधिक
मध्यम खंड द्रव्य	पूर्व-अपूर्व कृष्टियों में	प्रत्येक कृष्टि में समान

हेट्ठासीसं थोवं, उभयविसेसं तदो असंखगुणं ।
हेट्ठा अणंतगुणिदं, मज्झिमखंडं असंखगुणं ॥288॥

- अन्वयार्थ- पूर्वोक्त चार प्रकार के द्रव्य में (हेट्ठासीसं थोवं) अधस्तनशीर्ष-विशेषद्रव्य सबसे कम है।
- (तदो) उससे (उभयविसेसं) उभय विशेषद्रव्य (असंखगुणं) असंख्यातगुणित है।
- उससे (हेट्ठा) अधस्तन कृष्टिद्रव्य (अणंतगुणिदं) अनन्तगुणित है।
- उससे (मज्झिमखंडं) मध्यमखंड (असंखगुणं) असंख्यातगुणित है ॥288॥

www.JainKosh.org

पूर्वोक्त चार द्रव्यों का अल्प-बहुत्व

द्रव्य	अल्प-बहुत्व
अधस्तन शीर्ष विशेष द्रव्य	स्तोक
उभयद्रव्य विशेषद्रव्य	असंख्यात गुणा
अधस्तन कृष्टि द्रव्य	अनंत गुणा
मध्यम खंड	असंख्यात गुणा

अधस्तन शीर्ष विशेष द्रव्य

$$\frac{\text{व १२+}}{\text{ओ}\frac{\text{प}}{\partial}\frac{\text{४}}{\text{ख}}\,|\,\text{१६} - \frac{(\text{४}-\text{१})}{\text{ख२}}} \times \frac{\text{४}}{\text{ख 2}} \times \frac{\text{४}}{\text{ख}}$$ (ऋणरूप एक को गौण किया है ।)

$$= \frac{\text{व १२+}}{\text{ओ}\frac{\text{प}}{\partial}\,|\,\text{खख२}} \times \frac{\text{४}}{\text{ख २}}$$ (दो गुणहानि को ख ख २ लिखा ।)

$$\frac{\text{व १२+}}{\text{ओ}\frac{\text{प}}{\partial}\,|\,\text{खख४}}$$ (भागहार के २ का अपवर्तन किया । तथा $\frac{\text{४}}{\text{ख}}$ को ‘कुछ’ जानकर गौण किया।

उभयद्रव्य विशेष

$$= \frac{\text{व}\ १२ + |(\partial+1)}{\text{ओ}\ \frac{\text{प}}{\partial}\ |\ \frac{४}{\text{ख}}^{+|\ १६-(\frac{४-1}{\text{ख}\ २})}} \times \frac{४}{\text{ख}}^{+} \times \frac{४+1}{\text{ख}\ २}$$

$$= \frac{\text{व}\ १२ + |(\partial+1)}{\text{ओ}\ \frac{\text{प}}{\partial}\ |\ १६-(\frac{४-1}{\text{ख}\ २})} \times \frac{४+1}{\text{ख}\ २}$$

यह द्रव्य अधस्तन शीर्ष विशेष द्रव्य से स्पष्टतः असंख्यात गुणा दिखाई दे रहा है क्योंकि (असंख्यात + 1) का गुणाकार है ।

अधस्तन कृष्टि द्रव्य

$$\frac{\text{व १२+ | १६}}{\text{ओ}\ \frac{\text{प}}{\partial}\ |\ \frac{\text{४}}{\text{ख}}\ |\ \text{१६}-\left(\frac{\text{४}}{\text{ख २}}-1\right)} \times \frac{\text{४}}{\text{ख ओ}\ \partial}$$

$$= \frac{\text{व १२+ | १६}}{\text{ओ}\ \frac{\text{प}}{\partial}\ |\ \text{१६}-\left(\frac{\text{४}}{\text{ख २}}-1\right)\ |\ \text{ओ}\ \partial}$$

यह द्रव्य भी स्पष्टतः पूर्वोक्त उभयद्रव्यविशेष द्रव्य से अनंतगुणा है क्योंकि दो गुणहानि याने ($\frac{\text{४}}{\text{ख}}$ × २) का गुणकार है । यह गुणकार अनंत है ।

मध्यमखंड

$$\frac{\text{व १२+ } | \ \partial}{\text{ओ } \frac{\text{प}}{\partial}} \equiv$$

यह द्रव्य पूर्वोक्त द्रव्य से असंख्यात गुणा है क्योंकि इसमें (असंख्यात × अपकर्षण भागहार) का भाग नहीं है ।

www.JainKosh.org

अवरे बहुगं देदि हु, विसेसहीणक्कमेण चरिमोत्ति ।
तत्तो णंतगुणूणं, विसेसहीणं तु फड्डयगे ॥289॥

- अन्वयार्थ - (हु) निश्चय से (अवरे) जघन्य कृष्टि में (बहुगं) अधिक द्रव्य (देदि) देता है।
- (चरिमोत्ति) उसके बाद अंतिम कृष्टि तक (विसेसहीणक्कमेण) विशेषहीन क्रम से द्रव्य देता है।
- (तत्तो) उसके बाद (फड्डयगे तु) जघन्य स्पर्धक में (णंतगुणूणं) अनन्तगुणा हीन देता है और उसके बाद अंतपर्यन्त (विसेसहीणं) क्रम से विशेषहीन द्रव्य देता है ॥289॥

अपकृष्ट द्रव्य के निक्षेप का अल्प-बहुत्व

द्वितीय समय में अपूर्वकृष्टि की जघन्य कृष्टि में बहुत द्रव्य दिया जाता है ।

द्वितीय अपूर्व कृष्टि से चरम पूर्व कृष्टि तक चयहीन क्रम से द्रव्य दिया जाता है ।

चरम पूर्व कृष्टि से पूर्व स्पर्धक की आदि वर्गणा में अनंतगुणाहीन द्रव्य दिया जाता है ।

द्वितीयादि वर्गणा से नाना गुणहानि संबंधी चरम गुणहानि की चरम वर्गणा पर्यंत अपनी-अपनी गुणहानि के चयहीन क्रम से द्रव्य दिया जाता है ।

पूर्व और अपूर्व कृष्टियों में कुल देय द्रव्य

पूर्वकृष्टि क्र.	अधस्तनशीर्ष-विशेषद्रव्य	उभयद्रव्य विशेषद्रव्य	मध्यम खंड	कुल देयद्रव्य	नीचे की कृष्टि से ऊपर की कृष्टि में कम मिले हुए द्रव्य का प्रमाण
8	7 x 2 = 14	1 x 20	1 x 208	242	1 उभयद्रव्य विशेष – 1 अधस्तनशीर्षविशेष = 20 – 2 = 18
7	6 x 2 = 12	2 x 20	1 x 208	260	
6	5 x 2 = 10	3 x 20	1 x 208	278	
5	4 x 2 = 8	4 x 20	1 x 208	296	
4	3 x 2 = 6	5 x 20	1 x 208	314	
3	2 x 2 = 4	6 x 20	1 x 208	332	
2	1 x 2 = 2	7 x 20	1 x 208	350	
1	—	8 x 20	1 x 208	368	1 अपूर्वकृ. + 1 उ.द्र.वि. = 32 + 20 = 52
अपूर्व कृष्टि क्र.	**अधस्तन कृष्टिद्रव्य**	**उभयद्रव्य विशेषद्रव्य**	**मध्यम खंड**	**कुल देयद्रव्य**	
4	1 x 32 = 32	9 x 20	1 x 208	420	1 उभयद्रव्यविशेष = 20
3	1 x 32 = 32	10 x 20	1 x 208	440	1 उभयद्रव्यविशेष = 20
2	1 x 32 = 32	11 x 20	1 x 208	460	1 उभयद्रव्यविशेष = 20
1	1 x 32 = 32	12 x 20	1 x 208	480	

अपूर्व-पूर्व कृष्टियाँ

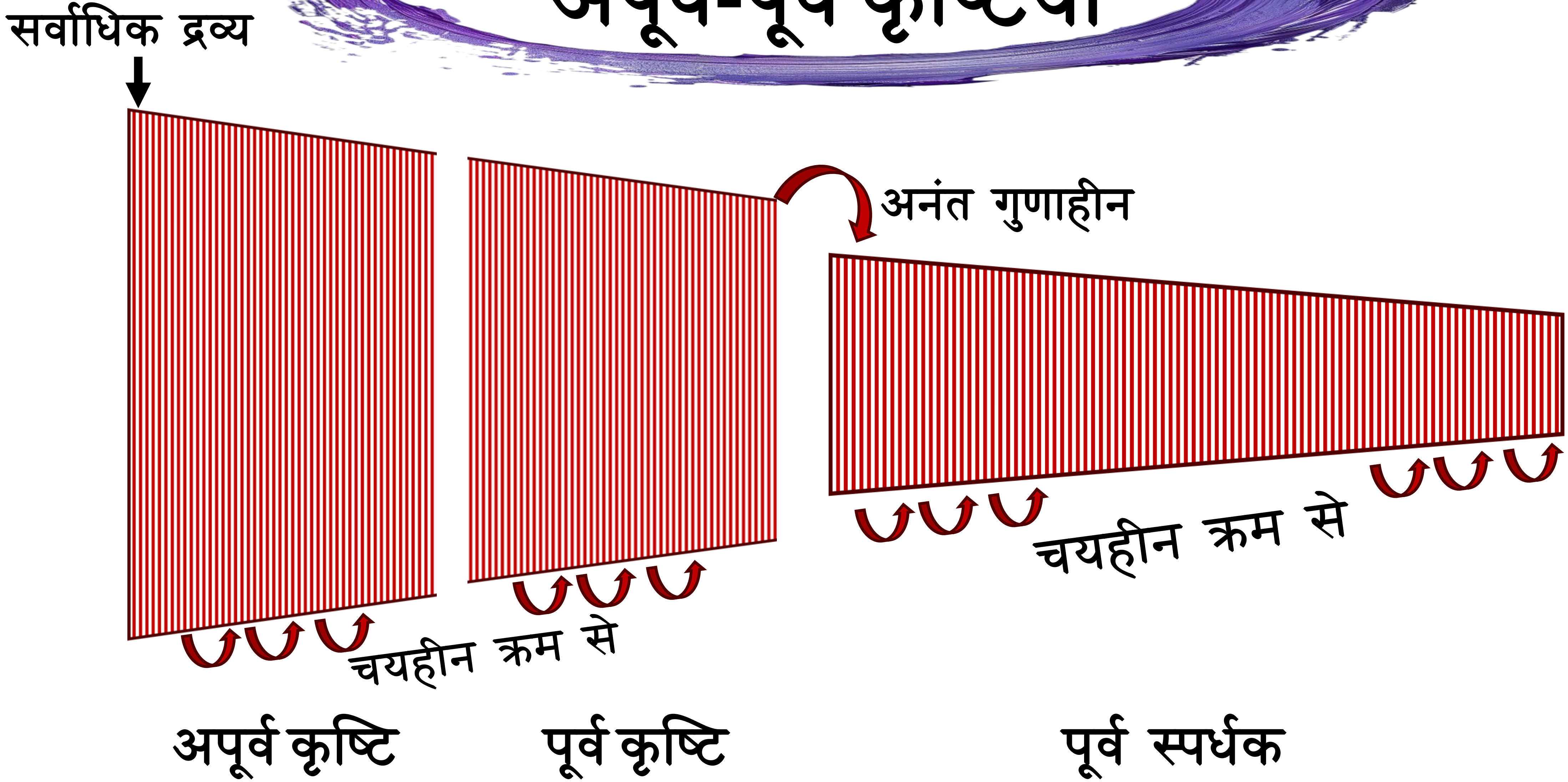

अपूर्व कृष्टियों में द्रव्य का विभाग

अपूर्व कृष्टि की प्रथम कृष्टि में एक अधस्तन कृष्टि द्रव्य, पूर्व-अपूर्व कृष्टि के आयाम प्रमाण चय, एक मध्यमखंड दिया जाता है ।

$$\frac{\text{व १२+} \mid \text{१६}}{\text{ओ}\,\frac{\text{प}}{\partial} \mid \frac{\text{४}}{\text{ख}} \mid \text{१६}-(\frac{\text{४}-1}{\text{ख २}})} + \frac{\text{व १२+} \mid (\partial+1)}{\text{ओ}\,\frac{\text{प}}{\partial} \mid \frac{\text{४}}{\text{ख}}+ \mid \text{१६}-(\frac{\text{४}-1}{\text{ख २}})} \times \frac{\text{४}+}{\text{ख}} + \frac{\text{व १२+} \mid \partial}{\text{ओ}\,\frac{\text{प}}{\partial} \mid \frac{\text{४}+}{\text{ख}}} \equiv$$

द्वितीय अपूर्व कृष्टि में पूर्ववत् एक अधस्तन कृष्टि द्रव्य, (पूर्व-अपूर्वकृष्टि–1) प्रमाण चय, एक मध्यम खंड दिया जाता है । अर्थात् मात्र एक चयहीन द्रव्य यहाँ दिया गया है ।

इस एक चय का प्रमाण है – $\frac{\text{व १२+} \mid (\partial+1)}{\text{ओ}\,\frac{\text{प}}{\partial} \mid \frac{\text{४}}{\text{ख}}+ \mid \text{१६}-(\frac{\text{४}-1}{\text{ख २}})}$

अतः प्रथम कृष्टि के द्रव्य से द्वितीय कृष्टि का द्रव्य कुछ हीन (एक चयहीन) ही है ।

www.JainKosh.org

तृतीयादि अपूर्व कृष्टियों में निक्षिप्त द्रव्य

इसी प्रकार चरम अपूर्व कृष्टि तक एक-एक चयहीन करते हुये तीन द्रव्य दिये जाते हैं ।

अंतिम अपूर्व कृष्टि में कितने चय दिये जाते हैं –

पूर्व-अपूर्व कृष्टि आयाम – (अपूर्व कृष्टि आयाम – 1)

$$\left(\frac{\text{४}}{\text{ख}} + \frac{\text{४}}{\text{ख ओ}\,\partial}\right) - \left(\frac{\text{४}}{\text{ख ओ}\,\partial} - 1\right)$$

$$\frac{\text{४}}{\text{ख}} + \frac{\text{४}}{\text{ख ओ}\,\partial} - \frac{\text{४}}{\text{ख ओ}\,\partial} + 1 = \frac{\text{४}}{\text{ख}} + 1$$

अर्थात् (पूर्वकृष्टि आयाम + 1) प्रमाण चय अंतिम अपूर्वकृष्टि को दिये जाते हैं ।

प्रथम पूर्व कृष्टि में निक्षिप्त द्रव्य

इससे आगे पूर्वकृष्टि की प्रथम कृष्टि में एक मध्यमखंड द्रव्य तथा पूर्वकृष्टि आयाम प्रमाण चय दिये जाते हैं ।

इसमें अधस्तन कृष्टि द्रव्य नहीं दिया जाता क्योंकि यह पूर्व कृष्टि है ।

इसमें अधस्तन शीर्ष विशेष द्रव्य भी नहीं दिया जाता क्योंकि इसी कृष्टि के समान ऊपर की सारी कृष्टियाँ करने हेतु शीर्ष द्रव्य दिया जाता है ।

यह पूर्व कृष्टि की प्रथम कृष्टि में निक्षिप्त द्रव्य; पूर्व निक्षिप्त द्रव्य से असंख्यातवां भागहीन एवं अनंतवां भाग हीन है । क्योंकि

1) जो अधस्तन कृष्टि द्रव्य यहाँ नहीं दिया है, वह चरम अपूर्व कृष्टि द्रव्य का असंख्यातवां भाग है ।

2) जो एक उभयद्रव्यविशेष यहाँ कम दिया है, वह चरम अपूर्व कृष्टि द्रव्य का अनंतवां भाग है ।

द्वितीयादि पूर्व कृष्टि में निक्षिप्त द्रव्य

पूर्वकृष्टि की द्वितीय कृष्टि में एक अधस्तनशीर्ष विशेष, एक मध्यम खंड और पूर्व से एक चयहीन उभयद्रव्य विशेष निक्षिप्त किया जाता है ।

यद्यपि यहाँ एक अधस्तन शीर्ष द्रव्य अधिक दिया है, तथापि पूर्व कृष्टि द्रव्य से इस कृष्टि में द्रव्य हीन ही निक्षिप्त हुआ है, क्योंकि पूर्व की अपेक्षा यहाँ एक उभयद्रव्यविशेष कम प्राप्त हुआ है । अधिक दिये द्रव्य की अपेक्षा कम किया द्रव्य अधिक है ।

एक अधस्तन शीर्ष द्रव्य; एक उभयद्रव्यविशेष का असंख्यातवां भाग मात्र द्रव्य है । अतः प्रथम पूर्व कृष्टि में निक्षिप्त द्रव्य से द्वितीय पूर्व कृष्टि में निक्षिप्त द्रव्य हीन है ।

www.jainkosh.org

तृतीयादि पूर्व कृष्टियों में निक्षिप्त द्रव्य

तृतीय पूर्व कृष्टि में दो अधस्तन शीर्ष विशेष, एक मध्यमखंड और पूर्व से एक चयहीन उभयद्रव्यविशेष निक्षिप्त किया जाता है । पूर्ववत् यहाँ भी ऋण, धन द्रव्य का विशेष जानना ।

इस प्रकार अंतिम कृष्टि तक एक-एक अधस्तन शीर्ष बढ़ता हुआ, एक-एक मध्यमखंड, एक-एक चय घटता हुआ उभयद्रव्यविशेष दिया जाता है ।

अंतिम पूर्व कृष्टि में (पूर्व कृष्टि आयाम – 1) प्रमाण अधस्तन शीर्ष द्रव्य, एक मध्यमखंड और एक उभयद्रव्यविशेष द्रव्य निक्षिप्त होता है ।

इस प्रकार द्रव्य निक्षिप्त करने पर पूर्व-अपूर्व सारी कृष्टियों का दृश्यमान द्रव्य एक गोपुच्छाकार हो जाता है ।

णवरि असंखाणंतिम-भागूणं पुव्वकिट्टिसंधीसु ।
हेट्ठिमखंडपमाणेणेव विसेसेण हीणादो ॥290॥

- अन्वयार्थ - (णवरि) विशेष यह है कि (पुव्वकिट्टिसंधीसु) पूर्वकृष्टि की संधि में (हेट्ठिमखंडपमाणेणेव) एक अधस्तनखंडप्रमाण से और (विसेसेण) एक उभयविशेष से द्रव्य (हीणादो) कम होने से (अपूर्वकृष्टियों की अंतिम कृष्टि से पूर्व कृष्टियों की प्रथम कृष्टि में द्रव्य) (असंखाणंतिमभागूणं) असंख्यातवाँ भागहीन और अनन्तवाँ भागहीन प्राप्त होता है ॥290॥

www.JainKosh.org

चरम अपूर्व कृष्टि से प्रथम पूर्व कृष्टि में निक्षिप्त द्रव्य

चरम अपूर्व कृष्टि में एक अधस्तन कृष्टि द्रव्य दिया जाता है । परंतु इसके आगे स्थित प्रथम पूर्व कृष्टि में यह द्रव्य नहीं दिया जाता । एक अधस्तन कृष्टि द्रव्य चरम कृष्टि द्रव्य का असंख्यातवां भाग है । अतः प्रथम पूर्व कृष्टि में असंख्यातवां भागहीन द्रव्य निक्षिप्त हुआ है ।

चरम अपूर्व कृष्टि से प्रथम पूर्व कृष्टि में एक चय (उभयद्रव्यविशेष) कम प्राप्त है । यह चय चरम अपूर्व कृष्टि द्रव्य का अनंतवां भाग है । अतः प्रथम पूर्व कृष्टि में अनंतवां भागहीन द्रव्य भी प्राप्त हुआ है ।

इस प्रकार द्वितीय समय में कृष्टियों की रचना की ।

अवरादो चरिमोत्ति य, अणंतगुणिदक्कमादु सत्तीदो ।
इदि किट्टीकरणद्धा, बादरलोहस्स विदियद्धं ॥291॥

- अन्वयार्थ- (अवरादो) जघन्य कृष्टि से (चरिमोत्ति य) अंतिम कृष्टि तक (सत्तीदो) शक्ति की अपेक्षा से (अणंतगुणिदक्कमादु) अनन्तगुणित क्रम से कृष्टियाँ हैं ।
- (इदि) इस प्रकार (बादरलोहस्स विदियद्धं) बादरलोभ का द्वितीय अर्धभागरूप (किट्टीकरणद्धा) कृष्टिकरण-काल समाप्त होता है ॥291॥

द्वितीय समय कृत कृष्टियों का अनुभाग

द्वितीय समय में कृत जघन्य कृष्टि का अनुभाग सबसे कम है । उससे द्वितीय कृष्टि का अनुभाग अनंत गुणा है । उससे तृतीय कृष्टि का अनुभाग अनंत गुणा है ।

ऐसे अंतिम पूर्व कृष्टि तक उत्तरोत्तर अनंत गुणा अनुभाग होता है ।

जिस प्रकार द्वितीय समय में पूर्व कृष्टियों के नीचे असंख्यातवां भाग प्रमाण नवीन अपूर्व कृष्टियाँ बनायी हैं, उसी प्रकार कृष्टिकरण काल के तृतीयादि प्रत्येक समय में पूर्व कृष्टियों के नीचे असंख्यात भाग प्रमाण नवीन अपूर्व कृष्टियाँ बनायी जाती हैं ।

इस प्रकार कुल कृष्टियाँ प्रथम समय में की गयी कृष्टियों की संख्या से कुछ अधिक प्रमाण होती हैं ।

सब कृष्टियों की संख्या एक वर्गणा के अनंतवें भाग प्रमाण ही रहती है । $\frac{४}{ख}+$

कृष्टिकरण काल के प्रत्येक समय में कृष्टिकरण हेतु पूर्व से असंख्यात गुणा द्रव्य अपकर्षित किया जाता है ।

सर्व कृष्टियों का अनुभाग

इन सभी कृष्टियों का अनुभाग पूर्व-पूर्व से आगे-आगे की कृष्टि में अनंतगुणा पाया जाता है ।

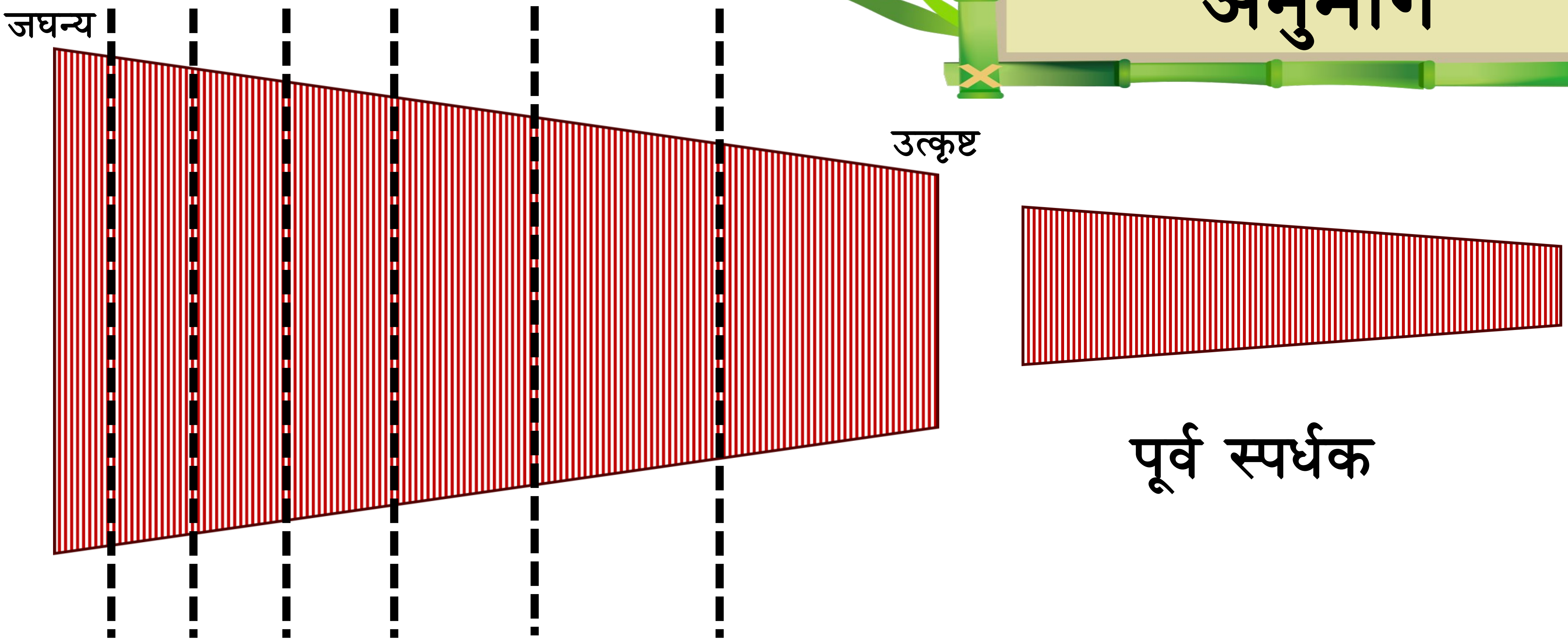

विभिन्न समयों में की गयी कृष्टियाँ

www.JainKosh.org

सर्व कृष्टियों का अनुभाग

जघन्य कृष्टि का अनुभाग सबसे कम $\frac{\text{व}}{(\text{ख})^{\text{४+}}_{\text{ख}}}$ प्रमाण है ।

द्वितीय कृष्टि का अनुभाग इससे अनंत गुणा $\frac{\text{व} \times \text{ख}}{(\text{ख})^{\text{४+}}_{\text{ख}}}$ प्रमाण है ।

इसी प्रकार उत्तरोत्तर कृष्टि का अनुभाग जानना ।

अंतिम कृष्टि का अनुभाग जघन्य स्पर्धक की आदि वर्गणा से अनंत गुणाहीन $\frac{\text{व}}{\text{ख}}$ प्रमाण है ।

www.JainKosh.org

उपशम व क्षपक श्रेणी के कृष्टिकरण में अंतर

जैसे क्षपक श्रेणी में सारे पूर्व-अपूर्व स्पर्धकों को ग्रहण कर कृष्टियाँ बनायी जाती हैं, वैसे उपशम श्रेणी में पूर्व स्पर्धकों का सर्व द्रव्य कृष्टि में नहीं दिया जाता ।

पूर्व स्पर्धकों के असंख्यातवें भागमात्र द्रव्य से ही सूक्ष्म कृष्टियाँ बनायी जाती है ।

शेष पूर्वस्पर्धकरूप द्रव्य कृष्टिकरण के अंत समय तक भी पूर्वस्पर्धकरूप ही रहता है ।

जो शेष पूर्वस्पर्धकरूप द्रव्य है, वह स्वस्थान में ही उपशमित किया जाता है ।

उपशम श्रेणी में सूक्ष्म कृष्टि ही होती है, बादर कृष्टि नहीं ।

- Reference : श्री लब्धिसार टीकासहित अनुवाद – ब्र. सुजाता रोटे, बाहुबली (वर्तमान में आर्यिका श्री शुद्धोहंश्री माताजी)
- For updates / feedback / suggestions, please contact
  - Sarika Jain, sarikam.j@gmail.com
  - www.jainkosh.org
  - ☎: 94066-82889
- इसी विषय के विडियो लेक्चर हमारे चैनल पर उपलब्ध हैं । आप अवश्य लाभ लें । www.Jainkosh.org/wiki/Videos पेज पर जाएँ एवं लब्धिसार की प्लेलिस्ट चुनें ।